वर्ष २४—२५२६.

Contains:

V. 24, no. 1–12, Jan.–Dec., 1901.

V. 25, no. 1–12, Jan.–Dec., 1903

V. 26, no. 1–12, Jan.–Dec. 1904

हिन्दीप्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट है आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन बायुसों मणिदीप सम थिर नहि टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २४ सं० १।२ } प्रयाग { जनवरी । फरवरी सन् १९०१ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा सर्वसाधारण से अग्रिम १॥≡)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।)=

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज १=)

—:००:—

नमूने की कापी =)॥ 25 cm.

१५-३-०१



हिन्दीप्रदीप

जि० २४ सं० १ । २ । } प्रयाग { जनवरी फेब्रुअरी सन् १६०१ ई०

वर्षारम्भ ।

धरणी धर, दरदहर, दयामय, दीनबन्धु, दीनानाथ, दुखी दुख भंजन, सज्जन मनरंजन, दुष्ट दलगञ्जन, कंजारुण लोचन, भव भय मोचन, कंस के शिरमर्दन, श्रीजनार्दन जगदीश की अनन्त असीम कृपा के अपार उद्गार से आज हम चौवीसवें वर्ष में पांव रखते हैं—काल के अखण्ड प्रचण्ड बेग का विविध छोटा बड़ा नपाना वर्ष मास तिथि प्रहर आदि में युग एक नपाना १२ वर्ष का माना गया है—हमे यह प्रगट करते बड़ा हर्ष होता है कि सो युग हम को दो बीतने पर आया इसलिये कि दो १२को जोड़ो तो एक २४ होता है—इस युग युग्मक मे न जानिये

कितने नये पुराने हो गये और पुराने प्रयाण कर गये पर हम खबीस सा दांत बाये ज्यों के त्यों बने रहे–अब हम खबीस से बने रहे सो क्यों? हमारी दुकान में माल का किसी तरह का टूटा है? कभी नहीं–अपने और दूसरे सहयोगियों से हर तरह पर उमदे से उमदा सब भाँत का सस्ते से सस्ता माल तैयार रहता है–पर अफसोस ऐसी जगह दूकान खोले हैं कि कोई बात नहीं पूछता; पड़े २ मक्खी मारा करते हैं–यह एक अनोखा गुण हमारे ही यहां के माल में पाया जाता है कि कभी जीर्ण सड़ा घुना पुराना होता ही नहीं हर समय ताज़ा व ताज़ा नौ बनौ–जी ऊबता हो, मन न लगता हो, दिल बहलाने का कोई ज़रिया न हो, २३ वर्ष की पुरानी जिल्दों में कहीं पर का कोई नम्बर निकाल पढ़ने लगिये जी बहल जायगा, कैसाही गम और उदासी छाई हो तबियत बश्शास हो जायगी, कुन्द की कलियों से दांत खिल उठेंगे, नहूसत पास न फटकने पावेगी–हमारे खरीदारों में कितने चार कोने का मुह बनाय कहते हैं पत्र तो अच्छा है पर समय से नहीं निकलता–हमें दुख होता है कि इस बात की शाबासी या धन्यवाद कुछ हई नहीं कि दिन रात हर तरह की झौंझट के झकोर में पड़ भी इसे हम नहीं बुझने देते और येनकेन इसे जुगनू सा जुग जुगाये हुये हैं–कहावत है जितना गुड़ छोड़ो उतना मीठा हो; हाथ कंगन को आरसी क्या; पढ़ने वालों से पूरी सहायता मिले हम इसे पाक्षिक और साप्ताहिक कर दें–पर हमारे हतक जीवन में सो काहे को होना है बरन वे दिन नज़दीक चले आ रहे हैं कि एक दिन हमारी कथामात्र शेष रहेगी–दूसरे यह भी बड़ी हार है कि देश में हिन्दी के जानने और पढ़ने वाले बहुत कम हैं जो हैं भी इधर उधर की खबर पढ़ने वाले हैं–गूढ़ विषय और साहित्य के मर्म जानने और सुनने समझने वाले बहुत कम कहीं दो एक कोने अंतरे छिपे छिपाये पड़े

हैं—उन में भी बहुधा तो ऐसेही हैं जो नीम हकीम बन हिन्दी के साहित्य की वृद्धि करना कैसा बरन हिन्दी की गरदन हलाल करने में बद्ध परिकर हैं—संस्कृत के दो चार शब्द जान लेनेही मात्र से चाहे शुद्ध शब्द लिखना भी न जानते हों प्रधान लिक्खाड़ बनने को टांग अड़ाये हुये हैं—

" कोकिला मौनं धत्ते वर्षा ऋतु समागते
यत्र भेकीपतिर्वक्ता तत्रास्माकं कुतो वचः "।

बरसात आने पर कोयल मौन धारण कर लेती है इस लिये कि मेढकों की टर २ के आगे अब हमारी मीठी बोल को कौन सराहेगा—अस्तु हमारे जो एकान्त भक्त हैं जिन्हें हमारा लेख पढ़ने से प्रयोजन है समय से हम उन से नहीं जा मिलते हमारे इस दोष पर जिनकी दृष्टि नहीं है उन्ही के सहारे हम लड़ खड़ाते हुये चले जा रहे हैं जै दिन चले जांय—

जवानी की उमंगें।

मनुष्य के जीवन में जवानी की उमर एक बड़ी बरकत है—फूल जैसा जब तक कली के रूप में हो बन्द रहता है डाल और पत्तों की आड़ में मुंदा हुआ न जानिये किस कोने में पड़ा रहता है—खिलने के साथही अपनी सुबास सौन्दर्य और सोहावनापन से सबों के नेत्र और मन मधुप को अपनी ओर खींच लाता है किसी तरह छिपाये नहीं छिप सक्ता—कली होने पर वह किस उठान से उठा था क्या २ उसमें गुन ऐगुन थे खिलने के साथही सब एक बारगी खुल पड़ते हैं; आगे को अब उस्से क्या २ उम्मेद है सो भी उसका इस समय का विकाश प्रगट कर देता है—उसकी इसी बात को हम उमंग इस

नाम से पुकारते हैं जो हमारी भविष्य आशाबन्ध को मज़बूत या ढीला करता है—"आत्मानं नावमन्येत" मनु की इस आज्ञा के अनुसार उन्नतमना ऊंची तबियत वालों में वह उमंग सदा ऊपर को उठने के लिये होती है; जघन्य निकृष्ट मलिन संस्कार मैली तबियत के लोगों में पहले तो उमंग होतीही नहीं हुई भी तो सदा नीचे गिरने की ओर होती है—नव युवक में ऊंची उमंग देख आशालता लह लहाती हुई नित्य दृढ़ होती जाती है; उन में उस उमंग का अभाव या उसे नीचे के ओर जाते हुये पाय आशालता सूख कर मुरझाती हुई ढीली पड़ जाती है—हम उत्तम श्रेणी में दाखिल हों इस के लिये यत्न करना किसी खास एक आदमी के हिस्से में नहीं आ पड़ा बरन हर एक आदमी को इसकी कोशिश करना मनुष्य जीवन की सफलता और मुख्य काम है—वह नौजवान जो ऊपर को नहीं देखता निश्चय है नीचे को ताकैगा; तीर चलाने वाला जो अपनी बाण विद्या से आकाश को बेध डालना चाहता है उसके तीर का निशाना कहां तक ऊंचे से ऊंचे पेड़ के ऊपर तक न जायगा—जिसके ऊंचे से ऊंचे खयाल हैं या जिसका ऊंचे से ऊंचे बर्ताव का क्रम है वह कहां तक अपने खयाल और बर्ताव में उससे बेहतर न होगा जिसमें उन बातों का अंकुर भी नहीं है—बोल चाल और काम में कपट या कुटिलाई का अभाव मनुष्य में चरित्र पालन का पीठ की रीढ़ के समान सहारा है और सचाई पर दृढ़ता तो मानो चरित्र का मुख्य अंग है—इसलिये ऊंची उमंग वाले युवक जनों को चरित्र पालन के इन दो प्रधान साधनों को दृढ़ता के साथ पकड़े रहना चाहिये—दूसरा बड़ा दोष नव जवानों में बनावट Assumption का है जैसा बाज़ कीड़े न जानिये कहाँ से पैदा हो फूल को विकाश के पहले ही जब वह कली रहता है तभी उसे नष्ट कर डालते हैं; वैसाही इस बनावट का अंकुर नवयुवकों में

तारुण्य के विकाश के पहले स्थान कर लेता है-हज़ारों लाखों नौजवान इस तराश खराश बनावट सजावट के पेच में पड़ दुर्व्यसनी हो २० या २५ वर्ष की उमर के पहुंचने के पहले ही लोहे तांबे उतर चुकते हैं; जो समय उनके पूर्ण विकाश का है उसमे जरा जर्जरित हो जाते हैं-गाल चुचक गया, पीले पड़ गए, कमर झुक गई, सच है "जो न होइहै बीस पचीसा सो का होइहै तीसा" इसलिये नई उमंग वालों को इस बनावट कृमि से अपने को बचाने को बड़ी चौकसी रखना उचित है-किसी बुद्धिमान् गंभीराशय का कथन है Always endeavour to be really what you would wish to appear हमेशा इस बात की कोशिश करते रहो कि तुम लोगों में अपने को वैसाही ज़ाहिर करो जैसा तुम वास्तव में भीतर से हो—नुमाइश नौजवान में आना उमर का तकाज़ा और उसकी नई २ उमंगों का एक अङ्ग समझा जाता है पर उसका न आना बहुत बड़ा सौभाग्य समझना चाहिये-ज़ाहिर दारी या नुमाइश न रख जो उमङ्ग उठती हैं वह उसके भविष्य जीवन में महोपकारी हो उसको Great man महापुरुष बना देने में सहकारी होती हैं—धीरे २ चुप चाप वह अपने महत्व की आलीशान इमारत लगा तार बनावता जाता है-शरत् कालीन कुंआर कातिक में जो बादल उठते हैं वे जितना गरजते हैं उतना बरसते नहीं पर बरसात में जो बादल आते हैं वे गरजते इतना नहीं पर बरस के वसुधा को सब ओर से जल मग्न कर देते हैं—वैसाही ओछे छिछोरे भड़क तो बहुत दिखलाते हैं पर करतूत बहुत कम उनमें देखी जाती है; किन्तु जो गुरुता संपन्न होते हैं वे मुख से कुछ नहीं कहते पर परिणाम से उन के कामों के फलों का अनुमान कर लिया जाता है—"फलानुमेयाः प्रारंभाः संस्कारा; प्राक्तनाइव"—"करतूती कहिदेत आपनहिं कहिये साँई"—और भी "गरजति शरदि न वर्षति

वर्षति वर्षासु निःस्वनो मेघः-नीचो वदति न कुरुते न वदति सुजनः करोत्यवश्यम्"-

नौजवानी की उठती उमर ऐसे अल्हड़पन की होती है कि इस उमर में Precaution दूरन्देशी या पूर्वावधान बिल्कुल नहीं रहता बुरी आदतें एक २ कर पड़ती जाती हैं-जिस समय उन खराब आदतों का आना आरम्भ होता है कुछ नहीं मालूम होता; जैसा पहाड़ों पर जब बर्फ गिरने लगता है कभी किसे के ध्यान में नहीं आता पीछे थोड़ा २ कर जमा होते २ वही Avalanche हिम संहति हो जाती है तब सूरज की तेज़ गरमी भी उसे नहीं टिघला सक्ती-इसी तरह अल्हड़पन की उमंग में खराब आदतें जब आना शुरू होती हैं बहुत उसपर ध्यान नहीं जाता पीछे वही इतनी दृढ़ और बद्ध मूल हो जाती हैं कि आमरणान्त जन्म भर के लिये दावनगीर हो जाती हैं और हज़ार २ उपाय उनके हटाने की की जाती हैं कोई कारगर नहीं होतीं-इससे गदह पचीसी का जब तक यह नाज़ुक वक़्त गुज़र न जाय तब तक बड़ी सावधानी रखनी चाहिये-इस नाज़ुक वक़्त में जो भलाई का बीज नहीं बोया जाता तो बुराई आप से आप आजाती है; जैसा खेत जिसकी धरती बहुत फलवन्त और उर्वरा है जोता बोया न जाय तो लम्बी २ घास उसमें खुद बखुद उपज आती हैं:-

Vice quickly springs unless we goodness sow;
Rankest weeds in richest garden grow.

बुद्धिमानो का सिद्धान्त है आदत या बान पड़ते २ पीछे दृढ़ और बद्ध मूल हो स्वभाव हो जाती है मानो माके पेट से वह वैसाही पैदा हुआ है—यूरोप के एक दार्शनिक का मत है कि मनुष्य पाप या पुण्य आदि जो कुछ करता है वह सब उसकी वैसी बान पड़ जाने का नतीजा है-खुलासा यह कि स्वभाव से बहुत कम काम होते हैं जो कुछ किया जाता है वह सब आदत है—तो आदमी क्या है मानो

जुदी २ तरह की आदतों का एक गट्ठर है इसी से यह कहावत चल पड़ी है "आदत दूसरे तरह का एक स्वभाव है" Habit is a seco d naturo इस कहावत का सबूत यों है कि धैर्य गाम्भीर्य विचार शीलता संयम आप की आदतों में दाखिल हो जाय तो छिछोरा पन दुच्चापन साहस आदि से आप को चिढ़ हो जायगी-ऐसाही जो ओछी छिछोरी आदत का है उस को संयमी विचारवान् गंभीराशय काहे को भले लगेंगे-एवम् चुगली चवाव हेर फेर कुटिलाई जिसकी आदत में दाखिल हो जाते हैं उसको चैन नहीं पड़ती बरन अन्न नहीं पचता जब तक किसी का कुछ चवाव या किसी की चुगली अथवा हेर फेर की कोई एक बात न करले-तो नव युवक को सावधान रहना चाहिये कि ये बुरी आदतें अपने में कदम न जमाने पावें नहीं जन्म भर छुटाये न छुटैंगी-

ये सब गुन ऐगुन जिन्हें हम ने ऊपर कहा प्रतिक्षण बड़े ज़ोर के साथ बढ़ते हुये आदमी के चरित्र को शोभित करते हैं या उसे दगीला कर डालते हैं-जिस्से हम अपने में चरित्र पालन की शेष बातों को भी नहीं बचाय सक्ते—जो सुफैद कपड़ा पहने हुये है कपड़ों के मैले होने के भय से जहां तहां बैठते सकुचता है; जो मैला कपड़ा पहने हुये है उसे क्या जहां चाहे वहां बैठ जा सक्ता है--

"यथाहि मलिनैर्वस्त्रैर्यत्रतत्रोपविश्यते।
एवं चलितवृत्तस्तु वृत्तशेषं न रक्षति"॥

जैसा उंजाला छोटे से छिद्र से भीतर प्रवेश कर अन्धकार को दूर हटा देता है वैसीही आत्मगौरव का अणुमात्र भी खयाल मनुष्यों को बुराई या बुरी आदतों की ओर से अलग करता है; जिनके आंख का पानी ढरक गया शरम और हिजाब को धो बैठे उन्हें नीचे

से नीचा काम करने में संकोच नहीं रहता नौ जवानों में इसके नमूने बहुत से पाये जाते हैं–नई उमंग में बहुधा नौजवान आत्म गौरव का ध्यान न रख बड़ों की बड़ाई रखने में चूक जाते हैं जिस्से संसार में बदनाम हो अशालीन और धृष्ट की उपाधि पाते हैं–इसलिये उन को बड़ों की बड़ाई रखना मानो अपना बड़प्पन बढ़ाना है इत्यादि उभ के उमंग की हम ने यहां पर कुछ थोड़ी सी समालोचना कर इस लेख को समाप्त कर अपने पढ़ने वालों के सामने उपहार की भांति दूसरा विषय रखते हैं–

किसी टीले पै था बैठा।
कोई कुक्कुट मचाता गुल॥
जो देखा लोमड़ी ने बस।
यही सोंचा कि दूं कुछ जुल॥
लगी कहने वो यों स्यानी।
"है भैया तू बड़ा मोहन॥
नहीं देखा कोई पक्षी।
रहा हो जिस्पै ये जोबन॥
तिहारा स्वर सुरीला है।
नहीं तुझ को कोई पाता॥
पिता तेराही यक केवल।
इसी अनुसार था गाता॥
जो आंखें किन्तु दप लेता।

तो अति उत्तम वो स्वर होता ॥
कि सबही जीव आनन्द में।
लगाते खूबही गोता" ॥

ये बातें सुन वो बोला यों।
"मेरा गाना भी वैसाही"
लिया उस छिन जो ढंप आंखें।
तो स्वर निकला वो कैसाही ॥

समय अच्छा ये लोमाड़ि पा।
बढ़ी धीरे से उसकी ओर ॥
झपट कर जा उसे थांबा।
भगी लेकर उसे भर ज़ोर ॥

इसी अवसर में आ पहुंचे।
बहुत कुत्ते औ दौड़ाया ॥
लगी तब सोचने मन में।
"अजब कौतुक ये पेश आया" ॥
भगी फिर भी निकल उन से।
औ उनको पीछे कर छोड़ा ॥
तभी कुछ सोंच मन कुकुट।
यों उसकी ओर मुख मोड़ा ॥

"कहो इनसे ये चिल्ला के।
मेरा कुक्कुट न छोड़ूंगी॥
जो करते बन पड़े तुमसे।
करो सब बल मैं तोड़ूंगी"॥
ज्योंही "कह" इतना बोली थी।
खुशी में भर वह मक्कारा॥
निकल भागा वह मुर्गा तब।
बजाया जय का नक्कारा॥
पटक सिर तब लगी कहने।
निरख गलती वो मूरख यों॥
"समय नहिं देख कर बोलें।
वह गिरते हैं गिरी में ज्यों॥
जभी चुप चाहिये उन को।
तभी वे बोल देते हैं॥
नतीजा उसका भी ऐसा।
मेरे अनुसार लेते हैं"॥
ये सुन कुक्कुट लगा हंसने।
कहा मेरा तो ये मत है॥
"न चहिये आंख ढप लेना।
जभी उनकी ज़रूरत है"॥

कृषकों की दुरवस्था।

हिन्दुस्तान की प्रजा दो हिस्सों में बटी है शिक्षित या नगर के रहने वाले अशिक्षित वा ग्रामीण–इन्में नगर के रहने वाले यद्यपि सब के सब शिक्षित या पढ़े लिखे नहीं होते किन्तु शिक्षित जन जो उनके बीच रहते हैं उनकी बातें सुन २ वे जो अर्द्ध शिक्षित या निपट मूर्ख हैं वे भी राज काज की बहुत सी बातें तथा विद्या या विज्ञान संम्बन्धी अनेक विषयों को समझ सक्ते हैं–कहावत है "सुन २ अन्धे पावें राह" राज काज या मुनिसिपलिटी तथा और कितनी दूसरी बातें जिनसे उन को पीड़ा या कष्ट पहुंचता है उनकी कोई न कोई उपाय कर गुज़रते हैं और अपने दुःख के बोझ को कुछ न कुछ हलका कर लेते हैं—और कुछ न हो सका तो समाचार पत्रों में जो कुछ उन्हें शिकायत है प्रगट कर सरकार तक उसे पहुंचाय उसके दूर करने की प्रार्थना कर सुचित हो जाते हैं—पर गांव के रहने वाले निपट अपढ़ शिक्षित समाज के बीच उनका बसोबास नहीं न सिवा खेती के कोई दूसरी उपाय उनको सूझती है कि जिस्से अपनी ज़िन्दगी काट सकें—नगर निवासियों को सैकड़ों उपाय सुख से जीवन पार करने की है इन बेचारों को तो वही एक खेती–"देवदत्तस्यैकः पुत्रः स एव ज्येष्ठः स एव कनिष्ठः" उसमें भी यदि कहीं अवर्षण अति बर्षण पत्थर पाला या टीड़ियों ने उपद्रव किया तो बुड़न्ताय नमः स्वाहा इदं बुड़न्ताय हुआ–दूसरे उन किसानों का मौसियायत भाई दुर्भिक्ष प्रतिवर्ष इन के पीछे पड़ा रहता है ; खेती की मूल उपयोगी बस्तु दो में एक बैल दूसरा समय से पानी का बरसना है सो इस समय दोनों से बड़ी त्रुटि है गत बर्ष के अकाल में देश का देश पशु बिहीन हो गया–जो देश गाय बैल भैंस इत्यादि की जन्म भूमि थी जहां से

हिन्दुस्तान भर में उत्तम जाति के पशु समूह जाते थे वहां कई वर्ष तक ऐसा दुर्भिक्ष रहा कि चारा की कौन कहे पानी तक उन्हें पीने को न मिला लाखों भैंस और गाय बैल ऐंठ के रह गये—ऐसा मालूम होता है अभी बीसों वर्ष में वह त्रुटि न पूरी होगी-दूध घी हम लोगों को दुर्लभ हो गया; वर्षों से सेर भर कहीं १४ छटांक का घीं बिक रहा है; न कोई आशा पाई जाती है कि अब घी पहले के भाव फिर बिकेगा; क्योंकि साल में जितने पशु बढ़ैंगे उतने भक्षकों के उदर में समा जायंगे संख्या उन की ज्यों की त्यों बनी रहैगी—हमारे यहां गो धन बड़ा धन समझा जाता है सो उस धन की जैसी इन दिनों कमी होती जाती है कदाचित् पहले कभी इतनी न थी-हम लोग जो नदियों में गंगा और पशुओं में गौ को देवी और माता कह पूजते हैं और इज्ज़त देते हैं उसका यही कारण है कि इन दोनों से हम को अनगिनत फाइदे होते हैं-गंगा का कछार जैसा उर्बरा होता है और जितनी पैदावारी उसमें होती है कहीं की धरती में उतनी उपज नहीं होती; सिवा इसके गंगा जल के समान शुद्ध निर्दोष जल कोई हई नहीं-ऐसाही गौ से भी हम को सब तरह का फाइदा है; दूध गौ का अत्यन्त निर्दोष और हल्का होता है; गोबर उनका खाद के काम में आता है; बैल बोझा ढोने और जोतने में बड़े उपयोगी हैं-दूसरे गोबर और मूत्र इतना रोग नाशक और शुद्ध समझा गया है कि हम उसे पंचगव्य के काम में लाते हैं जिसकी प्रशंसा में यह श्लोक बहुतही सयुक्तिक प्रतीत होता है-

"अग्रमग्रश्चरन्तीनामोषधीनां रसं बने-तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम्। यन्मे रोगांश्चशोकांश्च तन्मे हरतु गोमय"

अब रहा समय से पानी का बरसना सो उसमें सदैव एक न एक

खड़मखड़म लगा रहता है न जानिये किस के पाप से जिस समय पानी बरसना चाहिये उस समय नहीं बरसता कुसमय से बरस खेती को नष्ट अलबत्ता कर देता है जैसा गये साल हुआ-दोनों फसलों में पिछला पानी न होता तो इतनी उपज होती कि रेलीब्रदर हज़ार चेउंटियां ढोवन कर रहे हैं पर गेहूं यहां से चुकाये न चुकता-किन्तु दैव के सानुकूल न होने से खेतिहर दिन में एक बार साग पात मोटा महीन अन्न खाय निर्बाह करते हैं उपज का उत्तम पदार्थ बेंच ज़मीदारों के अत्याचार से बचते हैं नहीं तो सड़ा गला उनका हाड़ चूर २ कर दिया जाय—शिक्षा इन्में हई नहीं जो सरकारी आईन कानून समझते हों; न धन पास कि अदालत का खरचा उठाय सरकार के कानों तक अपने दुःख का निवेदन कर सकें—यह तो खेतिहर और असामियों का हाल हुआ अब टुक ज़मीदारों की ओर दृष्टि दो वे भी असामियों पर सख़्ती न करें तो कैसे सरकार का भरना भरैं न जानिये कै तरह के कर उन से लिये जाते हैं; ज़मीन की माल गुज़ारी, सड़-काना, अस्पताल का, गांव के पुलिस या चौकीदारी का खर्च, दिन रात की मेहनत के उपरान्त जिन्हें नोन रोटी किसी तरह खाने को मिल जाती थी उनका इस हाल के दुर्भिक्ष में हर और बैल तक बिक गया अब आगे देखैं कैसे इनकी गुज़रै-इस समय तो ज़मीदार और किसान दोनों तबाही के हालत में हैं उस्में किसानों का तो परमात्माही रक्षक है-

हिन्दुस्तान के रईस।

अपने पूर्व संचित पाप कर्मों का भुगतमान भुगतने को जो हत भाग्य इस भारत भूमि में हमें जन्म लेना था तो रईस पदवाच्य कोई बड़े ज़मीदार तअलुकेदार छोटे मोटे राजा या कोई बड़े महाजन

क्यों न हुये? घुंघुंरवाली जुल्फों में सेरों अतर और फुलेल का संहार किया करते; कचभार और रत्नों का हार धारण कर गुड़िया से बने हुयेअमीरों की फिहरिश्त में नाम दर्ज़ कराये गद्दी पर बैठे २ पान चबाया करते-हां में हां मिलाने वाले खुशामदी लोग अहर्निश घेरे रहते हम उनकी झूठी तारीफ सुन मन मगन फूले न समाते-या तो रातो दिन आठो पहर पूजा किया करते नहीं तो भांड़ भगतियों में मिल रूपाजीवा वारबनिताओं के साथ चैन उड़ाते—दीन दुखिया असामी या आश्रितों का धन चूस अमीरी का ठाठ गाड़ी घोड़ा शीशे आलात से घर साज वैभवोन्माद का अभिमान प्रगट करते हुये फूले न समाते-दो चार अक्षर की उपाधि पाने को राज कर्मचारी हाकिमों की सेवा टहल और भक्ति भावना में व्यग्र रहते; जिसमें दरबार में कुरसी पावें और राज भक्तों की लिस्ट में हमारा भी नाम रहे-अपनी बर्त्तमान परतंत्र दुःख दशा को सकल सुख की खान मानते; जैसा कुत्ता सूखी हड्डी चबाव अपनेही मुख का रुधिर चूस परम सन्तुष्ट होता है वैसाही सिंह का सा पुरुषार्थ तो काहे को हम से हो सक्ता खाली चरही में घेरौंधा खैला करते; केवल अपना आराम और चैन को मुख्य समझते और उसमें जितना अपव्यय होता कभी उसे बुरा न समझते; पर हां पबलिक सर्व साधारण के हित में कभी एक पैसा भी जो चला जाता तो उस पर बड़ा पछतावा होता अब विचार कर देखो तो इन श्रीमन्तों को हमें क्योंकर सुखी मानना चाहिये; इसमें सन्देह नहीं मनुष्य जीवन में सुख की खान विभव के ये आधार पात्र हैं किन्तु उनका अनुराग उनकी बुद्धि सच्चे चिरस्थायी सुख की ओर कभी दौड़तीही नहीं-ये उन्माद में आय दिन को रात और रात को दिन समझते हैं-

"या निशा सर्वभूतानां तस्यां यागर्ति संयमी।

यस्यां जाग्रन्ति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः" ॥

ये कुमार्ग को सुमार्ग और सुमार्ग को कुमार्ग मानते हैं; उसमें भी यदि कहीं तालीम की किंचित् झलक आ गई जैसा इन दिनों होती जाती है तब तो अंगरेज़ियत और नई रोशनी की यावत् बुराई सब इनके नस २ में व्याप जायगी; पुराने क्रम की जितनी बुराइयां विषय लम्पटता आदि उनकी ओर से घिन न आवेगी नई सभ्यता की बुराई भी अलबत्ता अंग २ में प्रवेश कर लेगी—बोतल का काग एक क्षण भर के लिये हाथ से न छुटैगा—पुराने ढंग की भलाई हिन्दू धर्म पर चित्त से श्रद्धा अलबत्ता जाती रहेगी; आचार विचार पर कुल्हाड़ा अवश्य है कि चलने लगे; संसोधन की और कोई बात हो चाहो न हो—इनके कुत्सित आचरण देख कौन सा विचारवान् होगा जिसके नेत्रों से आंसू न टपक पड़े परन्तु क्या किया जाय ईश्वर हम से रूठाही है कि भारत का उत्थान न होने पावे; नहीं तो जब और २ सभ्य देश के धनी कितनेही बिषय लम्पट होंगे पर देश अनुराग जाति वात्सल्य में उदाहरण हैं; पर ये कुम्भकरण की घोर निद्रा में सोये हुये हमारी लेखनी को शोक सागर में डुबाने का हेतु होते हैं—सुशिक्षा का सच्चा और वास्तविक बड़ा फल देशानुराग है सो देश की पूरी भलाई तभी हो सक्ती है जब हम को अपनी रीति नीति पर प्रेम हो तथा उसे अच्छा समझें—वंग देश और बम्बई प्रान्त के रहने वालों में शिक्षा का प्रादुर्भाव हम से पहले हुआ; आदि में वे भी ऐसेही भटक गये थे; अपनी रीति नीति से घिनाने लगे और विदेशियों की हर एक बात को अपने से श्रेष्ठ समझ स्वीकार कर लिया था; पर इनमें यह बात अब धीरे २ उठती चली जाती है—जहां बहुत से ऐगुण विदेशियों के उन्होंने सीखे वहां विदेशियों का सा देशानुराग और मुल्की जोश

तथा जातीयता का गौरव अपने में आना भी उन्होंने कुछ २ सीखा जो हमारी होनहार तरक्की का बीजरूप है—हमारे यहां के उच्च श्रेणी वाले अंगरेज़ी शिक्षा की बरकत पाय लामज़हबी शराबख़ोरी जिसे यूरोप वाले ख़ुद आप बुरा कहते हैं अलबत्ता सीख गये; साहस स्थिरता, धैर्य, आत्मत्याग, आदि उनके गुण एक भी न सीखा दैव को कुछ ऐसाही मनजूर है कि हम रोज़ नीचे को गिरते जांय लाचारी है ॥

पौगण्ड या कैशोर ।

बालक की ५ से १४ या १५ तक जो अवस्था है उसे पौगण्ड या कैशोर अवस्था कहते हैं; तारुण्य के विकाश के पहले जो समय मनुष्य का होता है वह कैसे सुख का रहता है जब कि बालक का चित्त तुर्त का मथा मक्खन समान कोमल निर्मल और सर्वथा विकार शून्य रहता है—उस समय जो २ बातें उसके नेत्र गोचर होती हैं उन्हें उसका निष्कपट सरल चित्त बिना शंका समाधान के ऋजुभाव से ग्रहण कर लेता है—तरुनाई का प्रवेश होतेही बाल्य काल के वे सब सुख सपने के से खयाल हो जाते हैं—सरल भाव, अकुटिल निष्कपट प्रीति; उदार व्योहार और पहले का सा वह अल्हड़पन, अब कहीं नाम को भी न रहा; स्कूल या पाठशाला में नित्य का जाना, मोटी २ किताबों का बोझ लादने का अभ्यास, सहपाठियों के साथ एकान्त गोष्ठी, अध्यापक या मास्टर साहब की उत्साह बढ़ाने वाली उपदेश सनी बानी, मेला तमाशा या तरह २ के खेल कूद में नई २ उमंग का अब कहीं सम्पर्क भी न रहा—हमारे साथ के पढ़ने वाले मित्र सब अब हमें अवश्य भूल गये होंगे; जिन्हें कुछ याद भी होगी तो वही स्नेह अब काहे को होगा जैसा तब था जब कि हम उनके साथ एकही बेंच पर संट के बैठते थे और मास्टर साहब को अनेक

तरह का भुलावा और जुल दे काना फुस्की में भांत २ की गप्पैं हांक २ कैसा प्रसन्न होते थे—मास्टर साहब जैसा देखने में कड़े और सख़्त मिज़ाज थे वह हम सब खूब जानते थे न केवल हमीं बरन हमारे समान नटखट जितने लड़के हैं सबी जानते होंगे; हम लोगों में से जो कोई कभी उनकी इच्छा के प्रतिकूल कोई काम कर गुज़रता था वह सबेरे की जून स्कूल खुलतेही साक्षात् रुद्र मूर्ति अध्यापक महाशय की भौं चढ़ी तिरछी चितवन देखतेही चट भांप लेता था कि देखैं आज हम पर क्या भद्रा उतरै ईश्वरही कुशल करे—सदा कड़ाई करते रहे हों सो भी नहीं कभी २ हंसाते इतना थे और ऐसी बात बोलते थे कि हंसते २ पेट फूलने लगता था—जब क्रोध में भर शेर सा तड़प गरजने लगते थे तब क्लास भर में सन्नाहटा छा जाता था और हम सब लोग मौन हो बकरी सा दुबक बैठ रहते थे-ये सब बातें ऊपर से केवल रोब जमाने के लिये थीं भीतर से ऐसे कृपालु कोमल और सरस हृदय थे मानो दाखरस हो ॥

"उपरि करवालधाराः क्रूराः सर्पाः भुजंगम पुंगवाः ।
अन्तः साक्षाद्द्राक्षा दीक्षा गुरवो जयन्ति केपि जनाः" ॥

जो घुड़कते झिड़कते थे सो सब इसी लिये कि हम अपना पाठ याद करने में सुस्त और आलसी न हो जांय—अंगरेज़ी के प्रसिद्ध कबि गोल्डस्मिथ ने अपने काव्य डिज़रटेड विलेज में कैसा अच्छा चित्र इसी का उतारा है—

A man severe he was and stern to view,
I knew him well and all the truent knew;
Well had the boding tremblers learn'd to trace,
The day's disasaters in his morning face;

Full well thay laugh'd with counterfeeted glee
At his jokes for many a jokes had he;
Full well the busy whisper circling round,
Conveyd the dismal tiding when he froun'd;
Yet he was kind or if severe in ought,
The love he bore to learning was in fault.

अब वह कोई बात न रही; कैसे २ कुटिल नीरस कपट नाटक की प्रस्तावना सदृश मानसिक भाव हमारे चित्त में उठा करते हैं—बहुत चाहते हैं कि सुख चैन के समय वे दिन अब फिर आवें पर क्यों नहीं आते? जी चाहता है मोहन, बचन, लुन्नू से फिर वैसाही गप्प हाकैं; तब कैसा कहकहे मार २ हंसा करते थे और बिना कारन हंसी आती थी; अध्यापक महाशय कितना खिजलाते झुंझलाते थे पर हम एक नहीं मानते थे—अब वैसी हंसी एक बार भी आवे तौ नोन तेल लकड़ी की चिन्ता के कारण दुःख दुर्भर हृदय के दुःख का बोझ कितना हलका हो जाय; पर वह हंसी अब काहे को आवेगी—अब पहिले के माफिक हम उन छोटे २ बालकों में बेधड़क क्यों नहीं जा मिलते? अब हमारा उन के साथ मिलना सींग कटाय बछड़ा बनना क्यों जान पड़ता है? अपना मानसिक भाव गोपन कर पहिले के समान सरल अकुटिल भाव से वे अब हम से काहे को मिलैंगे? कवियों ने युवा अवस्था को सब सुखों की खान लिखा है किन्तु सो सब उन धूर्तों की जल्पना मात्र है—"कवयः किन्न जल्पन्ति" इस समय तो हमारा पूर्ण यौवन है फिर हमें सुख क्यों नहीं मिलता? माना कि जवानी का आलम बड़ा मज़ेदार और दिलचस्प होता है इस में हमें दुनिया की सब तरह की लज़्ज़तों का मज़ा मिलता है; आशिकी का मज़ा उठाते हैं, माशूकी की लज़्ज़त चखते हैं, नव यौवन के उमंग में बड़े २ काम सहज में कर डालते हैं, नई जवानी, नया जोश, नई उमर, नवीन उत्साह, नूतन अभिलाष, जितनी बात सब नई पुरानी कोई नहीं—किन्तु बिचार दृष्टि से देखो तो सिवा हिर्स

हवा के लड़कपन का वह वास्तविक सच्चा सुख कहीं नाम को नहीं–धिक् यह वह समय है जिस में जो कुछ करते हैं किसी से तृप्ति और सन्तोष नहीं होता–जितना भोग विलास करते जाते हैं जी नहीं ऊबता बरन चौगुनी लालसा बढ़ती है "हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्द्धते" जैसा आग में घी छोड़ने से आग चौगुनी धधकती है–अनगिनत रुपया पैदा किया, बड़ी २ बिद्यायें सीखा, बहुत तरह के गुण उपार्जन किये, संसार में सर्व ओर अपना यश फैलाया पर तृप्ति न भई; हवस नित २ बढ़ती ही गई; सदा यही इच्छा रहती है थोड़ा और होता तो अच्छा था–आज एक काम सिद्ध हो जाने पर मन आनन्द से पूर्ण हो जाता है उस समय यही मालूम होता है मानो स्वर्ग सुख भी तुच्छ और फीका है–वही किसी काम के बिगड़ जाने पर ऐसी उदासी छा जाती है कि समस्त संसार असार जंचता है–सुतराम् अन्त को यही सिद्धान्त ठहरता है कि यौवन सुख केवल अतृप्त लालसाओं के और कुछ नहीं है सच्चे सुख का समय केवल बाल्य अवस्था है ॥

जेहालत।

जो जैसा होता है उसे उसी तरह की बात सूझती है मैं एक जाहिल आदमी हूं तो मुझे यही सूझा कि आज आप को यह सुनाऊं कि जेहालत का चर्खा कैसे ओटा जाता है–आप इस जेहालत को देख अनेक तर्क बितर्क मन में करने लगे होंगे कि यह क्या बक रहा है; पर मैं इस दुनिया के जितने जाहिल हैं सबों की कसम खा कर कहता हूं कि यह बात बिल्कुल सच है, कि जेहालत हिन्दुस्तान की नाक है, शोभा है, यहां के लोगों के करतूत की बड़ी उमदी बानगी है–सच तो यों है कि इस जेहालत ही ने हम लोगों में हिन्दूपन थोड़ा बहुत कायम रक्खा नहीं तो अंगरेज़ी सभ्यता और अंगरेज़ी शिक्षा तो उसे नेस्त नाबूद कर चुकी थी–"प्रत्यक्षे किं प्रमाणम्" हमारे यहां की धर्मशीला स्त्रियां क्यों ऐसी हैं और धर्म की नाक थांबे हुये हैं? इसी लिये कि जाहिल होती हैं–दूसरे धूर्त

हमारे ब्राह्मणों के लिये तो यह साक्षात् कामधेनु हैं-जिन की मनसा वाचा कर्मणा यही कोशिश रहती है कि इस मूर्खता या जेहालत का साम्राज्य बना रहे और हम मग मानता लूटते खाते रहैं-मरदों में तीन चौथाई रोशनी की झलक पाय हमारे चंगुल के बाहर होते जाते हैं स्त्रियां तो हमारे काबू की रहैं-इस में ४ अक्षर हैं जे-हा-ल-त—जे से जेमना या जेहलखाने की भांत घर में मस्त पड़े रहना; जिसे ब्राह्मणों ने अपने मतलब की समझ पहले ही से चुन रक्खा है कहा भी है "नृत्यन्ति भोजने बिप्राः" भोजन कहीं मिले तो ५ कोस का धावा मारना कोई बड़ी बात नहीं है "शस्कुलीशब्दमात्रेण किंदूरं पंच योजनम्" जिनका मधुरप्रिय होना ग्रन्थकार भी लिख गये हैं "ब्राह्मणो मधुरप्रियः"-दूसरा अक्षर हा से हारनां क्षत्रियों ने इसे अपने लिये चुन लिया; पानीपत की लड़ाई में जो हारे तो आज तक हारतेही जाते हैं-तीसरा हर्फ ल से लकीर के फकीर या लण्ठता जो हमारे यहां के बनिज करने वालों के हिस्से में आया जितना और जिस तरह का बनिज बाप दादों के समय से चला आया है उस्से रेखा मात्र आगे न बढ़ैंगे-जब कि यूरोप अमरिका जपान आदि देशों का ब्योपार और वहां के ब्योपारी दुनिया भर को नाधे हुये हैं; यहां का ब्योपार बढ़ने की कौन कहै नित्य २ संकुचित होता जाता है; धर्म भ्रष्ट होने की डर से बाहर कहीं दूसरे देश में जाया नहीं चाहते बहुत आगे वढ़े कलकत्ता बम्बई का माल दिल्ली या कानपुर लादा दिल्ली का कलकत्ता बम्बई पहुंचा दिया-सारांश रेल का भारा या आढत आदि के खरचे में चला गया रुपया पीछे हम्माली के हक्क माफिक एक पैसा या एक पाई मुनाफे को गनीमत मान सन्तोष कर बैठ रहे-उस में भी किसी काम को शुरू करने के पहले ब्याज के नुकसान का परता फैला लेंगे; रुपया चाहे रक्खा रह जाय पर किसी काम में जब उसे लगाना

चाहेंगे तो ब्याज के नुकसान का परता ज़रूर फैला लेंगे-दूसरी बड़ी हार यह है कि हम लोग कम्पनी खड़ी कर कोई काम करना जानते ही नहीं-चौथा अक्षर-त से तरक्की या तालीम या तपना जिसे शूद्रों ने चुना-सच है "नापित के घर धर्म्म दास हैं बह्मन पूत मदारी" ऊंची जाति-वाले ऊंचाई के अभिमान में नीचे को गिरते जाते हैं नीचे के लोग ऊपर को उठ रहे हैं कलि धर्म में ऐसा काहा भी है "नीचा महत्वं गताः" ॥

इस जेहालत में केवल हिन्दू ही पड़े हों सो नहीं मुसल्मान भी उस से छुटे नहीं हैं; बल्कि जेहालत शब्द उर्दू या फारसी ही की लुगत में पाओगे-जीम से जमाना साज़ी-हे से हेरम-आ से आराम तलबी या आशिक मिज़ाजी-लाम से लूट लड़ाई या लान तान-त से तअस्सुब-जिस से इन की कौम की कौम बिगड़ कर कमज़ोर हो गई और होती जाती है-यह तो मैं ने आम तौर पर जेहालत की हालत ज़ाहिर किया अब किन में क्या २ कौन सी जेहालत है सो भी ज़ाहिर करना ज़रूरी मालूम होता है-इस ब्रिटिश सिंह के सभ्यशासन में जिस ने अपनी चाल ढाल छोड़ यूरोप के स्वर्गीय देव दूतों की चाल ढाल रहन सहन इंखतियार कर सींग कटाय बछेड़ा न बना वह निस्सन्देह कट्टर जाहिल है-जिस ने टट्टी के आड़ में शिकार की भांत दिलदार यार के साथ जाम पर जाम न चलाया उसे भी पूरा जाहिल जट्ट मानना चाहिये-संशोधकों के या एडिटरों के फेर में पड़ जिस ने भारत को गारत करनेवाली कुरीतों से मुह मोड़ना चाहा उसे जाहिल नहीं तो क्या कहैं-ऊंचे कुल में जन्म ले ब्राह्मण क्षत्री हो जिस ने पांचो पीर को न माना मुहर्रम में ताज़िया पर शरबत रेउड़ी न चढ़ाया वह भी जाहिलों में क्यों न शामिल किया जाय? कितने सुधार चाहने वाले सुरधाम सिधार गये तब जिस ने आरत भारत के सुधार का ज़रा भी मन किया उसे भी हम जाहिलों की लिस्ट में शामिल करेंगे-इत्यादि

सब जाहिलों का सिरदार एम-पी-भट्ट

पहेली।

कांच का ऐसा महल बनाया।
उसके अन्दर जो कोई आया॥
बाहर तो कुछ लगा न झटका।
अन्दर जाकर उलटा लटका॥
कपड़ा लत्ता सब उतरावे।
इस सूरत से बाहर आवे॥
खिचा २ फिर जग में डोलै।
पग से चलै न मुह से बोलै॥

फोटोग्राफ

सूपनखासी है एक नार।
आग खाय और हगै अङ्गार॥
देश २ का पानी पीवै।
धूम के बल पर जग में जीवै॥
सुरमा वो हर आन लगावै।
बन २ सब को आंख देखावै॥
फूंक २ के रक्खे पांव।
पर नहिं देखै धूप और छांव॥
उस डाइन से पेश न जाय।
लश्कर हो तो पकड़ बिठाय॥

रेलगाड़ी

हा! कष्टं खलु वर्तते कलियुगे धन्या नरा ये मृताः॥

हा! समय का परिवर्तन कैसा कठिन है आज जो वस्तु सोने की है कदाचित् कल्ह वही मृत्तिका हो जाय, आज जहां देवालय खड़ा है कदाचित् कल्ह वही मस्जिद् बन जाय; जहां आज मधुर वाणी से वेद शास्त्र उच्चरित हो रहे हैं वहीं कल्ह आजान के कर्ण कटु शब्दों के कर्णगत होने की सम्भावना होती है-जिन का हृदय आज पुत्रोत्पत्ति कि सुख से विकसित हो रहा है क्या जानें कल्ह उन को पुत्र शोक की प्रबल आग में झुलसना पड़े, जिन के मन सरोवर की आशा कुमुदिनी सुयोग्य सन्तान निशाकर की अपेक्षा कर रही है उन को कदाचित् कुपुत्र घनघटा की दुःसह छाया में चुपचाप शिर नीचा करना पड़े-यह कहना कि इन बातों की केवल शंका मात्र होती है ठीक नहीं जान पड़ता कि ऐसी दुर्घटना वास्तव में घटित हो; मुझ को तो यही प्रतीत होता है कि यह सब आपत्तियां अवश्यम्भावी हैं-क्योंकि जब प्रत्यक्ष देखने में आता है कि समस्त भारत बर्ष पर काल कराल ने अपनी दोहाई फेर दिया तो ऐसा होना क्या दुष्कर है-हाय क्या यह वही भारत बर्ष है जहां ऐसे २ विद्वान् एवम् महर्षियों का जन्म हुआ था कि जिन के ग्रन्थ क्या बरन एक एक अक्षर समस्त संसार को चकित कर रहे हैं-क्या यह वही भूमि है जहां अखण्ड प्रतापी राज शिरोमणि श्री रामचन्द्र, रघु, भागीरथ, पुरु, युधिष्ठिर, भरत प्रभृति महारथी दृढ़ प्रतिज्ञ लोगों ने जन्म लेकर न केवल भारत की बीरत्व पताका को बरन यहां के श्रेष्ठ आर्य्यधर्म्म और कीर्त्ति की उज्वल ध्वजा को भी उन्नत कर दिया था-क्या यह वही देश नहीं है जहां जन्म लेकर कविकुल तिलक कालिदास ने साक्षात् सरस्वती के मुख से "अहसेवत्वम्" इन शब्दों को कहलवा लिया था-हाय क्या कहैं यह समय के कठिन परिवर्त्तन ही का

प्रभाव है कि इन प्रश्नों के उत्तर का शब्द बिना कर्ण गोचर हुये हृदय बिदीर्ण किये देता है, प्रिय पाठक वृन्द क्या हम लोग उस दोष में समावेशित न होंगे? क्या हम लोगों को आर्य्य सन्तान बनते लज्जित न होना चाहिये? क्या हमारी रक्त संवहिनी शिराओं में जो उन महर्षियों का या बीरवरों का रक्त प्रवाहित है उस का हम पूर्णतया आदर करते हैं? किं बहुना क्या हमारे ऐसे कर्म हैं कि हम अपने को कुपुत्रत्व के महा-कलंक से बचा सकें? "मैं मुक्तकंठ हो कहता हूं कदापि नहीं" प्रिय पाठक मेरे इस बक बक झक झक के दूर करने के लिये अपने हृदय में न्याय को स्थान देकर तनिक बिचार की सूक्ष्म दर्शक ऐनक लगाकर देखिये कि हमारी क्या अवस्था है और इस अवस्था को क्यों प्राप्त हुये-यह किस घोर पातक का परिणाम है और इस से निर्मुक्त होने की क्या उपाय है? यदि मेरी प्रार्थना के अनुसार आप यह कष्ट स्वीकार करैंगे तो अवश्य यही कहैंगे कि अपनी पूर्व परिचिता प्रणाली का निरादर अथच उस का बिस्मरण ही इस का मुख्य कारण है-हा क्या कष्ट है मुझ को तो इस समय कविरत्न पण्डित राज जगन्नाथ का श्लोक याद आता है॥

तृष्णालोल बिलोचने कलयति प्राचीं चकोरी गणे—मौनं मुञ्चति किञ्च कैरव कुले कामे धनुर्धुन्वति—माने मानवती जनस्यसपदि प्रस्थातु कामे ऽधुना धातः किन्तु बिधौ बिधातु मुचितो धाराधराडम्बरः॥ १॥

अर्थात् कहां तो लोगों को यह आशा होती थी कि पश्चिमी विद्या निशाकर के उदित होने से मूर्खता तिमिर का नाश होगा और अस्ताचलस्थ पूर्वी दिवाकर के पुनारगमन का शुभ सम्बाद प्राप्त होगा; कहां

"अधिक अन्धेरो जग करैं मिल मावस रवि चन्द" का सा हाल हो गया-वह आशा केवल निराशाही रह गई क्योंकि उस कौमुदी ने हम को ऐसा निद्रामत्त कर दिया कि प्रभात का होनाही प्रायः हम को भूल गया-यहां लों कि बहुतेरे तो "दिवाकर में भी प्रकाश है अथवा उसकी शरण में भी सुख की सम्भावना है किंवा कौमुदी में जो बहुत सी वस्तु स्पष्टतया नहीं मालूम होती उन को भी पूर्णतया सूर्य के प्रखर किरणों के प्रकाश में हम देखते सक्ते हैं" इन बातों में भी प्रायः शंका करने लगे हैं-हाय कैसी शोचनीय अवस्था है जब हम अपने परम पूज्य बूर्बजों के भाषा ही का इतना निरादर करने लगे तो हम को उनकी प्रणाली कब भली लग सक्ती है और यदि कदाचित् भली भी लगे तो वह हम को मिलै कहां? अथवा जब उन के आचरणों ही का हम अनुगमन नहीं कर सकते तो वह सुख ही कब हम को प्राप्त होता? अथच उन के सन्तान ही बनने से हमारी क्या प्रतिष्टा हो सक्ती है? महोदय पाठक मेरा यह अभिप्राय कदापि नहीं है कि अङ्गरेज़ी विद्या के पढ़ने अथवा उस में निपुण एवं विद्वान् होने में किसी प्रकार की हानि है बरन यह आशय है कि हम अपने पूर्बजों की भाषा को भी पुनरुज्जीवित करने का उद्योग करैं और इस प्रकार पश्चिमी विद्या में अपने भगीरथवत् प्रयत्न करने का अलभ्य लाभ उठावैं-यदि किसी शब के समीप अन्यान्य मनुष्य न जांय तो क्या उस मृतक के सन्तानों को भी उन के देखा देखी उस शब के स्पर्श करने में घृणा होनी चाहिये कदापि नहीं-अथवा यदि उस शब में कदाचित् दैवात् पुनः जीव आजाय और इस से अन्यान्य लोगों को हर्ष न हो तो क्या उस पुनरुज्जीवित मृतक के सन्तानों को भी कुछ हर्ष न होगा-पाठक यदि सन्तान सुयोग्य हैं तो उन के हर्ष की कोई सीमा न रहैगी; सुयोग्य सन्तान जैसा उस के मरने पर मर्मस्पृक् रुदन

करता है ऐसाही इस दुर्लभ घटना से प्रमुदित भी होगा—हा हमारे पूर्वजों की मातृ भाषा संस्कृत विदेश में जा बसे और हम लोग सोते रहें—अथवा यदि कभी कुम्भकरण की सी हमारी निद्रा भङ्ग भी होतो अपने ही दल को नाश करने लगैं यही हमारा कर्तव्य कर्म है—क्या हम को अपने पूर्वजों की प्रशंसा विदेशियों के मुख से सुन लेनेही मात्र से सन्तुष्ट हो बैठ रहना चाहिये ? वरन हम को उचित है कि उन के गुणों को उद्दीप्त कर के दिखा दें कि वे केवल प्रशंसनीय ही नहीं वरन पूजनीय भी थे—और उन का शुद्ध रक्त अब भी हमारी प्रत्येक रगों में उसी भांति प्रवाहित है ॥

अब मैं अन्त में अपने पाठकों से यह निवेदन करूंगा कि मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि आप लोग आकाश में नौका चलाने का यत्न करैं अथवा सुई के नाके में से ऊंट निकालने का उद्योग करैं—केवल यह उद्योग करना कि पुस्तकालय पाठशाला और कालिज किये जांय मेरी सम्मति में ठीक नहीं है क्योंकि उस से इतना देशोद्धार की सम्भावना कदापि नहीं हो सक्ती जितना अपने आप को गुणवान् करने से हो सक्ती है—समुदाय व्यक्तियों से बनता है अतएव यदि एक २ व्यक्ति अपनी २ उन्नति कर ले तो समुदाय की उन्नति हो चुकी—यदि प्रत्येक भारत वासी अपने को तथा अपने सन्तानों को संस्कृत पढ़ाने वा पढ़वाने का प्रयत्न कर लें तो जितना समय विद्यालयों के स्थापन करने में व्यतीत होगा उतने में एक पीढ़ी विद्वानों की श्रेणी में अपनी गणना करा लेगी—एक बड़े सुयोग्य अंग्रेज़ आचार्य्य का कथन है कि "विद्या के प्रचार और उस से लाभ उठाने की सब से सुगम रीति उसका प्रचार और उस की उन्नति प्रत्येक मार्ग और गृहों में करना है"—हमारे यहां के ग्रन्थकारों का भी कथन है ॥

अञ्जनस्य क्षयं दृष्ट्वा बल्मीकस्यच संचयम्।
अवन्ध्यं दिवसं कुर्य्याद्दानाध्ययनकर्म्मभिः॥

आज दिन प्रायः सभी पत्रों के कलाम के कलाम इस विषय से रंगे जाते हैं, प्रत्येक प्लैटफार्म से उन्नति की धुन सुन पड़ती है, कालेज और पाठशाला भी वर्त्तमान हैं, तथापि इन सब का परिणाम मन मोदकसे अधिक मीठा नहीं हुआ है—कारण यही है कि कहा सुना तो बहुत जाता है परन्तु करने का विचार कम है—यदि वस्तुतः प्रत्येक आर्य महाशय दृढ़प्रतिज्ञ हो कर चाणक्य के नाईं शिखा खोल लें और कार्य सम्पादन करने ही पर उस के पुनर्बन्धन का प्रण कर उस में तन मन धन से प्रवृत्त हो जायं तो अवश्यमेव उन का अभीष्ट सिद्ध हो जाय—परन्तु नहीं नहीं मुझ को भ्रम हुआ आज दिन तो हमारे आर्य कुलोत्पन्न महाशयों के शिर से शिखा तो शशक विषाण के समान लुप्त ही हो गई और होती जाती है फिर तो वह बेचारे क्या बान्धते क्या खोलते—अस्तु अब व्यर्थ बकबाद बढ़ाना पाठकों का समय नष्ट करना है कदाचित् कोई महाशय जो समय हमारे बकबाद के सुनने में नष्ट करेंगे उसी में विद्या के वास्तविक प्रचार और उन्नति की चेष्टा करें क्योंकि

निज भाषा अबनति भये होय धर्म्म को लोप।
धर्म्म लोप तो जानिये जगत् स्वामि को कोप॥
जग स्वामी जब रुष्ठ है करो कोटिहू यत्न।
डूबा दुःख सागर महें मिलै न सुख सो रत्न॥

मातुहिं ते शिशु होय सुखी अरु मातु बियोग ते छीजतु है।
सोई मातु हमें अब छांड़ि चली एहि कारन चित्त पसीजतु है॥

श्रीश उठो परिनाम विचारहु आलस बस क्यों खीजतु है ।
निज सम्पति खोय दियो सवही एक केवल हांथ को मीजतु है

परन्तु हां यह क्या यहां तो "कर कम्पै लेखिनी डगै" का ढङ्ग आता जाता है मैं सर्वथा अनहोनी बात की प्रस्तावना तो नहीं कर बैठा हूं यहां तो किसी को अपनी हिन्दी का भी ध्यान वा सत्कार नहीं है तो संस्कृत की कौन चलावे क्योंकि अभी तो सभी तृषित चातक के समान उसकी बाट जोहते थे परन्तु जब किसी जगन्माननीय महा पुरुष के उद्योग से विचारी चिरविस्मृता सरला नागरी को राजाश्रय प्राप्त हुआ तब उसको कोई सहारा देने वालाही न रहा यहां तक कि एक वर्ष व्यतीत हो गया प्रायः उस के दोही चार सुमान्य सन्तानों से उस की भेंट हुई होगी—अब इसका परिणाम तो सोंचिये यदि हमारी शिथिलता का अन्त शीघ्रही न हुआ तो कहीं "यह अपने सन्तानों की प्रेमास्पद नहीं है" इस विचार से विचारी कठिनता पूर्वक प्राप्त स्थान से च्युत न हो जाय और यदि कहीं ऐसा हुआ तो क्या खसम कर के छोड़ने का उपहास असह न होगा ? क्या नागरी प्रचारिणी के सभासद भी "राज काज दरवार में फैलावहु यह रत्न,, इस उद्देश्य को भूलकर केवल नये सभासदों का मूड़नाही अपना कर्त्तव्य समझने लगे हैं ? पाठक महाशय अब हमारे परम दयालु न्याय परायण सुयोग्य लाट साहेब की सुखप्रद छाया का आनन्द आप चिरकाल लों नहीं ले सक्ते प्रति पक्षी आप की ढिलाई का लाभ उठाने को टक टकी लगा रहे हैं अत एव यह समय हाथ पांव ढीला करने का नहीं है जिस कार्य को आपने इतने धैर्य और साहस से उठाया है उस को पूरा कीजिये "प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति"॥

श्रीकान्त पाठक

क्षत्रिय या खत्री ।

भाषा में क्षत्रिय का अन्त का अक्षर य को नहीं बोलते और पञ्जाब जो इन की मातृ भूमि है जहां से कुल हिन्दुस्तान में खत्री फैले हुये हैं क्ष को ख बोलते हैं वैसाही जैसा बङ्ग देशी विष्णु को विष्टु कहते हैं—मूर्द्धन्य वर्ण य—क्ष—ण आदि बहुधा कंठयदान्त्य बर्णों में बिगाड़ कर इसलिये बोले जाते हैं कि अति उष्ण देश वा अति शीत प्रधान देशों के रहने वालों के शरीर पर जब तौन २ देश के जल वायु का असर होता है रंग उन का गोरा काला या गेहुंआं हो जाता है तो मन में ऐसी कल्पना उठती है कि उस जल वायु का कुछ असर मनुष्य के जिह्वा पर भी हो जाता है कि कड़े अक्षरों के उच्चारण में सामान्यतः सर्वसाधारण को आसानी नहीं रह जाती इसलिये साधारण बोल चाल में यह क्ष ख में बदल दिया गया है—मनु के लेख अनुसार सरस्वती दृषद्वती नदी का बीच, पंचनद "पञ्जाब" मत्स्य अर्थात् जैपुर का प्रान्त आदि देश ब्रह्मर्षि देश माने गये हैं; कुरूजांगल जो पञ्जाब का एक प्रान्त है उस का ज़िकर तो वेदों में भी किया गया है—और ये देश बड़े पवित्र और उस समय सभ्यता की चरम सीमा को पहुंचे थे—मनु ने तो इन देशों की यहां तक तारीफ किया है कि इन देशों में परम्परागत जो शिष्टाचार और व्यौहार चला आया है उसी को उदाहरण मान पृथ्वी के जितने मनुष्य हैं सब अपना २ आचार विचार व्यौहर तथा रहन सहन सीखें ॥

कुरुक्षेत्रं च मत्स्यांश्च पाञ्चालाः सूरसेनकाः ।
एष ब्रह्मर्षि देशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तरः ॥
एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्बमानवाः ॥

जिस देश को मनु ने इतना पवित्र और उत्तम माना है वह इन खत्रियों की जन्म भूमि है जहां से ये सब ठौर फैले हैं पेशौर से लगाय कलकत्ता तक कोई प्रान्त नहीं बचा जहां ये न हों और जहां होंगे वहीं माननीय और प्रसिद्ध होंगे—दबे पड़े हों ऐसा कहीं नहीं देखा जाता जो इन के आभिजात्य की यह एक बड़ी भारी पहचान है—जिन के कुल का लगाव प्राचीन समय से किसी अच्छे ठेकाने का है उन्ही में यह बात हो सक्ती है—दूसरे संस्करात्मक क्रिया कलाप यज्ञोपवीत आदि जो इन के यहां किये जाते हैं वे सब वैसे ही हैं जैसा ब्राह्मणो में होते हैं—गोत्र प्रवर शिखा सूत्र इन का ब्राह्मणो से बहुत मिल जाता है तब ४ वर्ण की प्रथामे इन का द्वितीय होना क्योंकर सन्दिग्ध रहा—जो कुछ सन्दिग्ध है वह इतनाही कि क्षत्रियत्व का काम इन में न रहा चिरकाल से इन की वणिग् वृत्ति हो गई है—सो क्षत्रियत्व आर्य जाति में कायम रहता तो हिन्दू कभी गर्द खोरे और पराधीन होते; तब इन बेचारों का क्या कुसूर—सारस्वत जो दश ब्रह्मणो की प्रथामे एक हैं उन से इन का इतना अधिक लगाव है कि वे इन की किछी रोटी भी खा लेते हैं—अब इस बिगड़े समय में जब खान पान में हम लोगों में ८ कनोजिये ९ चूल्हे प्रसिद्ध हैं खत्रियों की सारस्वतों से कच्ची रसोंई का सहभोजन किसी तरह पर साधारण बात नहीं है—रजोगुण की ये साक्षात् मूर्ति होते हैं इन में कोई एक भी ऐसे नहीं पाये जाते जो भोगलिप्सू या विषयास्वाद में पगे हुये न हों—रजोगुण की पराकाष्ठा अत्यन्त विलासी होना भी प्रगट करता है कि ये राजवंश के हों तो अचरज क्या है—काम तो इन में बनियई का आ-गया है पर टिर्र और अहंभाव ज़रा भी कम नहीं हुआ जो द्विजाति संस्कार का फल हो या कुल परंपरगत पुराने क्षत्रियों से इन का लगाव बना चला आरहा है उसी का यह परिणाम है—सौन्दर्य सौभाग्य और

लक्ष्मी के तो ये कृपा पात्र होते हैं जो इन के शुद्ध आर्य जाति के होने की पूरी गवाही है-लक्ष्मी का ये सर्वतोभावेन बड़ा आदर करते आये वणिग् वृत्ति सधारण कर सरस्वती का सब भांत अनादर इन्होने किया; यही कारण हुआ कि क्षत्रियों का केवल संस्कार मात्र इनमें बच रहा-स्वार्थ को जैसा ये पहचानते हैं कोई इतना न पहचानता होगा Self Sacrifice आत्मात्याग जो हम लोग भूल गये यह इन्ही का प्रसाद है-अब तक विद्या का इन में अभाव था इसी का यह फल है-अब इस अंगरेज़ी राज्य में जब सरस्वती की धारा पूर्ण रीति से प्रवाहित हो रही है इन्होने सरस्वती को भी आदर देना आरम्भ कर दिया है अचरज क्या कुछ दिनों में क्षत्रियत्व के पूर्ण गुण इन में आजांय-इतिहासों से प्रगट है कि गुरू गोबिन्दसिंह के समय बीरता भी इन में थी सो समय तो अब कोसों हम से दूर गया-लक्ष्मी के कृपा पात्र ये हुई हैं जिस दिन इन की जाति की जाति पूर्ण विद्वान् हो सरस्वती का भी आदर देने लगेगी उस दिन इन के समान हिन्दू जाति में कोई दूसरा न रहेगा ये सर्वोपरि हो जांयगे॥

पृथ्वी के महाद्वीपों की अपूर्व व्युत्पत्ति।

एशिया-असल इसकी एशिया अर्थात् ऐश की जगह॥

यूरुप "यो रूपो विद्यते अन्यत्र सब को ले जांयगे हमी" रुपया या रूपा चांदी को कहते हैं बस सारी दुनिया की चांदी लूटने वालों की बास भूमि॥

आफ़रिका असल में "काफ़रिका" अर्थात् काफ़रों की जन्मभूमि कालान्तर होने से काफिरिका का ककार उड़ गया॥

आमेरिका असल में "आमेरुक" अर्थात् मेरू पर्यन्त प्रसारित देश

कोई२ "अमेरिका" अर्थात् अमर देवताओं की ज़मीन कहते हैं–और दिहाती हल्का बन्दी मदर्सों के लड़के इस के अन्त में की मिला कर–आ–मेरी–काकी पढ़ कर खूब हंसते हैं–बहुतेरे इसको "आम्बेरिका" पुकारते हैं और समझते हैं कि इसमें आम और बेर बहुतायत से होते हैं॥

आस्ट्रेलिया–असल में "अस्त्रालय" हिन्द के प्राचीन अस्त्र मुसलमानो के आने पर इस महाद्वीप को भाग गये–लेकिन चूंकि अपने खास वतन को मुसीबत के वक़्त दगा देकर दूसरे मुल्क में भाग गये इस लिये खुदा के यहां से हुक्म हुआ कि इन सबों को अंगरेज़ों के हवाले कर दो–पस अब उन्ही के पास हैं; आस्ट्रेलिया भी उन्ही के कब्ज़े में है॥

बीमार हिन्द के लिये सिहतावर जोशांदा।

फूट के कडुये दाने ६ माशे। तुखम कुढंग १ तोला। ज़िद्द और काहिली की सूखी फली २ तोला। रोगन फसाद ९ माशे। गुल गुलामी ३ माशे मग़ज़ पखिडताई–३ तोला। इन सब दवाइयों को कूट पीस कपर छान कर पांच सेर काले पानी में चढ़ा दो जब पानी जलते २ छटाक रह जाय तब सेर भर बर्फ और सोडा वाटर में मिलाय मियां हिन्द को पिला दो और नीचे लिखा मरहम उसके बदन भर में पोत दो तो ज़रूर "कनसरवेटिज़िम" अपरिबर्तनशीलता का सब नसूर फौरन दूर हो घावों को जल्द पुरा देगा॥

मरहम

विलायती कुतिया की ज़बान। अंगरेज़ी लियाकत का तेल। लाल समुद्र का पानी। काले आदमी की मोमियाई। यकीन कामिल रक्खो इन दो दवाइयों से हज़रत हिन्दोस्तान ज़ुरूर आराम हो इस बुढ़ापे में भी एक बार फिर पहले के से हट्टे कट्टे संड मुसंड हो

उठेंगे। हकीम-पस्त दिल—शिकस्त अकिल—खफगान। लुकमान॥

गटा परचा।

गटा परचा जो रबर के नाम से विदित है एक प्रकार के वृक्ष का जमा हुआ दूध है यह वृक्ष हिन्दुस्तान के पूर्व मलाया देश और उसके निकटस्थ टापुओं में होता है—डाकृर विलियम मन्टगोमेरी और सर-जोज़फ आलमीडा ने पहले पहल यूरोप में इसका प्रचार किया। ये दोनो साहब बहुत दिनों तक मलाया देश में रहे हैं। सन ईसवी १८८३ में सर जोज़फ आलमीडा ने थोड़ा सा गटा परचा बतौर नमूने के लण्डन की एशियाटिक सोसाइटी को भेजा था परन्तु डाक्टर विलियम मान्टगोमेरी साहब ने इस के गलाने और उत्तम २ वस्तुओं के ढालने की युक्ति निकाली इसलिये उक्त साहब को इस में प्रधान समझना चाहिये। डाकृटर साहब ने इस के गलाने और ढालने ही की युक्ति नहीं निकाली वरन उस वृक्ष के बढ़ने और दिन प्रतिदिन वृद्धि होने की भी उपाय सोंची—नहीं तो ऐसी ही खींच इस लाभ दायक वस्तु की रहती तो कुछ दिनों में ये वृक्ष निर्मूल हो जाते फिर गटा परचा का मिलना दुर्लभ हो जाता और सैकड़ों चीज़ें जो इस से बनती हैं कहीं मयस्सर न होतीं। गटा परचा के प्रचार के थोड़े दिन बाद तक विलायत के लोगों को भी इस के निकालने की रीति इसकी उत्पत्ति और यह क्या वस्तु है यह सब एक भेद रहा जैसा आज कल हम लोगो को है; प्रायः यहां के सर्व साधारण यही समझते हैं कि यह किसी जानवर का चमड़ा या किसी जीव का जमाया हुआ रुधिर है इसी प्रकार अनेक तर्क वितर्क उठा करते हैं। इसका वृक्ष ४० से ७० फुट तक ऊंचा होता है मलाया प्रायद्वीप के देश भर

मैं यह उगता है परन्तु पहाड़ों की तराई में बिशेष होता है; पत्तियां इस की विलायती सेहुड़ के समान होती हैं ऊपर की तरफ हरी और नीचे रोंयेदार भूरे रंग की होती हैं। गटा परचा जमा हुआ दूध है जो इन्ही वृक्षों की नसों में भरा रहता है। मलाया वाले इन वृक्षों के धड़ में खढ्ढा बना देते हैं जिस्में से दूध चूने लगता है और कांढ़ २ मिट्टी के बर्तन में रखते जाते हैं उसी प्रकार जैसा ताड़ी कांढ़ी जाती है। एक वृक्ष से एक बार लग भग १० सेर के दूध निकलता है तद्देशीय लोग उन वृक्षों में से निकालते हैं और उन वृक्षों की नसों को भी भली भांत पहचानते हैं। यह दूध काढ़ने के उपरान्त घाम में सुखाया जाता है और तब गटा परचा तैयार होता है। सच्चा गटा परचा कुछ सफेदी लिये रहता है पर बाज़रू मैला भूरे रंग का होता है यह पानी में बहुत कम गलता है पर राल के योग से जल्द गल जाता है और कोई ऐसा तेज़ाब नहीं है जो इसे गला सके सिवा सलफाइड आफ कारबन Sulphide of carbon के–दो तीन प्रकार के तेल भी हैं जिस में यह गल सक्ता है जैसा बेंज़ाइन Benzine और न्याप्था Neptha इत्यादि– यह बड़ी उपयोगी वस्तु है इस से बार्निश, लेई, सांचे, पेन्सिल, कंघी, पेन्सिल, का लिखा मिटाने के लिये रबर इत्यादि बनते हैं जिनका हाल हम फिर कभी प्रकाश करेंगे॥

नागेश या नागोजी भट्ट।

भट्टोजीदीक्षित के उपरान्त महा वैयाकरण नागेशही हुये हैं–यह आश्वलायन शाखाध्यायी महाराष्ट्र ब्राह्मण थे; शिव भट्ट इन के पिता का नाम और सती मा का; शब्देन्दुशेखर, परिभाषेन्दुशेखर, मंजूषा आदि व्याकरण के प्रसिद्ध ग्रन्थों के कर्ता थे; जिन ग्रन्थों के पढ़ने पढ़ाने

में आज दिन हमारे इन प्रान्तों के पण्डित उमर की उमर खो डालते हैं और अन्त में सिवाय व्याकरण में प्रक्रियांश की खट पट के और कुछ नहीं जानते कोरे के कोरे मूर्ख बने रह जाते हैं—तीतर बटेर की लड़ाई समान सभाओं में मेढक सा उछल २ शेखर की सौबार की रटी पंक्ति और सूत्रों के न्यास के सिवाय और उस्मे कुछ भी तत्व नहीं रहता; न कोई दूसरा विषय विद्या का उन्हे आता है जिसपर शास्त्रार्थ करैं न उन के जानने की इन पण्डितों को इच्छा रहती है; क्योंकि यहां तो यह अहमेव का भाव मन में धसा हुआ है कि हम सर्वज्ञ हैं तब क्यों किसी दूसरे विषय के जानने के लिये मन दौड़ाय अल्पज्ञ बनें—सच मानिये इन मूर्ख पण्डितों को ज़रा भी अन्तःपात नहीं रहता साधारण श्लोकों को भी अच्छी तरह नहीं लगा सक्ते—आधुनिक पण्डितों में इस मूर्खता के प्रचारक औवल तो भट्टोजीदीक्षित हुये जिन्हो ने सिद्धान्त कौमुदी बनाय पाणिनिव्याकरण को पत्थर कर डाला; उपरान्त नागेश ने तो उसे इतना भारी शास्त्र कर डाला कि जन्म भर पढ़ा करो और व्याकरण के ग्रन्थ न चुकैं—यह भट्टोजीदीक्षित के पौत्र हरि दीक्षित के शिष्य थे और पायगुण्डोपाधिधारी शब्देन्दुशेखर के टीकाकार वैद्यनाथ के गुरु थे—शृङ्गबेर पुराधीश राम नामक किसी छोटे राजा के यह आश्रित थे वहां से इन्हे कुछ जीविका मिली थी—यह शृङ्गबेर पुर प्रयाग से १० कोस पश्चिम गंगातट पर एक ग्राम है जो अब राम चौरा इस नाम से प्रसिद्ध है—गुह यहीं रहता था जिसकी सहायता से रामचन्द्र जी दण्डकारण्य को जाते समय गंगा के पार उतरे थे चैत्र की रामनवमी को प्रति वर्ष यहां बड़ा मेला होता है—शब्देन्दुशेखर और सिद्धान्त मंजूषा में ये दो श्लोक नागेश ने दिये हैं जिससे इन की जीविनी का बहुत कुछ पता लगता है॥

शिवभट्ट सुतो धीमन्सती देव्यास्तुगर्भजः ।
याचकानां कल्पतरोररिकक्षहुताशनात् ॥
शृंगबेरपुराधीशाद्रामतोलब्धजीविकः ।
नत्वा फणीशं नागेशः कुरूतेऽर्थ प्रकाशकम् ॥

व्याकरण के इतने ग्रन्थ इन्हो ने रचे हैं–वृहन्मंजूषा, लघुमंजूषा, परम लघुमंजूषा, वृहच्छन्देन्दुशेखर, लघुशब्देन्दुशेखर, परिभाषेन्दुशेखर, लघुशब्दरत्न, भट्टोजिदीक्षित कृत शब्द कौस्तुभ की विषमी नामक टीका, महाभाष्य पर प्रदीप नाम कैयट की टीका का विवरण उद्योत; प्रायश्चित्तेन्दुशेखर, आचारेन्दुशेखर, तीर्थेन्दुशेखर, श्राद्धेन्दुशेखर, कालेन्दुशेखर, आदि १२ शेखर धर्मशास्त्र के ग्रन्थ; योगवृत्तिनामक योगशास्त्र का ग्रन्थ; उद्योत नामक काव्य प्रकाश की टीका मर्म प्रकाशक रस गंगा धर की टीका, रसमंजरी की टीका, गीत गोविन्द की टीका, ये सब साहित्य के ग्रन्थ हैं; पुराण में बाल्मीकि रामायण की टीका, बिष्णु पुराण की टीका, आध्यात्म रामायण और दुर्गा सप्तशती की टीका–भट्टोजीदीक्षित के गुरूभाई शेष बीरेश्वर के शिष्य जगन्नाथ पण्डित राज जिन का समय ईस्वी सन् १६६६ निश्चय किया गया है उन के शिष्य के शिष्य का समय नागेश पण्डित का था जो १७०६ ईस्वी सन् निश्चय किया जाता है–सन् १७१४ में जब जयपुराधीश महाराज जय सिंह ने अश्वमेध यज्ञ किया था तो उस में काशी से नागेश को भी इन्होने बुलाया पर यह कह कर आने से इन्हो ने इनकार किया कि हम क्षेत्र सन्यास लिये हैं बाहर न जांयगे–कहते हैं कि यह कुलीन महाराष्ट्र ब्राह्मण के घर में पैदा थे और १६ वर्ष तक काशी के गुंड़ों के बीच घूमा करते थे तब तक एक अक्षर पढ़े लिखे नथे–इन के पिता की पुरोहिती वृत्ति थी; एक समय किसी यजमान के साथ

कहीं परदेश गये थे उस यजमान ने पण्डितों की सभा किया था जिस में ये बड़े ऊचे आसन पर धृष्टता के कारण जा बैठे जो आसन बड़े पण्डित के बैठने योग्य था—इन की यह धृष्टता देख निपट मूर्ख समझ किसी पण्डित ने इन्हे डांटा और वहां से उठा दिया–इसपर इन को बड़ी ग्लानि और लज्जा आई–विद्या विहीन का मरण अच्छा ऐसा निश्चय कर देहंपातये कार्यंवा साधये के सिद्धान्त पर आरूढ़ हो किसी पण्डित से सरस्वती के बीज मंत्र का उपदेश पाय वागीश्वरी देवी के मन्दिर में जप करने लगे; सरस्वती का इन को साक्षात्कार हुआ और उन से वर पाय भट्टोजिदीक्षित के पौत्र हरिदीक्षित से विद्या पढ़ने लगे और महान् पण्डित हुये–विद्वद्वृन्दाग्रसर सकल शास्त्र पारावार पारीण नागेश को व्याकरणाब्धितरणि कर्णधार की पदवी सर्वथा समुचित है–नागेश के उपरान्त फिर ऐसा व्यापक पण्डित हिन्दुस्तान के इन प्रान्तों में नहीं हुआ जिस के बनाये ग्रथों की पंक्तियों पर इन दिनों के महा पण्डितों का घन्टों तक शास्त्रार्थ होता है—सिद्धान्त कौमुदी की टीका मनोरमा पर जो नागेश ने दंश दिये हैं वही नवीन और प्राचीन के झगड़े हो गये और उन्ही का विचार इस समय पंडितों की सभा में किया जाता है—एक वह समय संस्कृत का था कि एक २ पण्डित इतने २ ग्रन्थ लिख गये–एक यह समय है कि हमारे ब्राह्मण उन ग्रन्थों का पढ़ना तो एक ओर रहा नाम तक उन ग्रन्थों के नहीं जानते–जिस कुल में दस पुश्त से बराबर कुल परम्परागत विद्या चली आई है उस कुल में यातो निपट मूर्ख अब जन्मते हैं या पढ़ते हैं तो अंगरेज़ी के विद्वान् होते हैं–जिन के पुरुखे भाष्य कैयट मंजूषा माघ नैषध किरात के अक्षरों पर बादानुबाद करते थे उन के वंश धर अब शेक्सपियर मिलटन और कारलाइल की पंक्तियों के विचार में प्रखरता प्रगट करते हैं—किमाश्चर्यम् समय एव करोति बलाबलम् ॥

पुस्तक प्राप्ति ।

श्री विक्टोरिया अष्टादशी—महाराणी विक्टोरिया का शोक प्रकाशक १८ छप्पैं इस्में हैं पण्डित श्याम विहारी मिश्र एम—ए—और पं० शुक देव विहारी मिश्र बी—ए—रचित—कविता इसकी बहुत अच्छी है नमूने की एक छप्पै यहां पर हम उध्रित करते हैं—"कत जननी जनवरी अभागिनि पापनिसानी—बाइसवीं तिथि भई प्रगट कत औगुन खानी—मन्द प्रभाकरि सूर चन्द्र मुख करिखआनी—करि सब कहं बिनु मातु हरी जेहि जग महरानी—जुबिलीहीरक जुबिली हूलखि राज मिलाय प्रिटोरिया—अब इन्द्रलोक शासन करन गई मातु बिक्टोरिया"—इसी तरह के १८ छप्पै इस में हैं—इंडियन प्रेस इलाहाबाद से) ॥ का टिकट डांकव्यय भेज बिना मूल्य पुस्तक मिल सकती है ॥

दिन फेरबत्तीसी ।

"दिनन के फेरतें सुमेर होत माटी को" इस समस्यापर जुदे २ कवियों का संग्रह मास्टर कन्हैया लाल द्वारा संग्रहीत—विद्या विलास प्रेस बनारस में छपी है मूल में डाकव्यय ‑) ॥ है संग्रह यह बहुत उत्तम है समय पर कहने लायक है ॥

यजुर्वेदीय नित्य कर्म पद्धति ।

मनुष्य को सबेरे से उठ सांझ तक के नित्य कर्म किस भांत करना चाहिये इस को सविस्तार और प्रमाण सहित इससे ग्रन्थकार ने बड़े परिश्रम से संग्रह किया है—जो नई सभ्यता की चटनी चाटे हैं उनकी तो

बात ही निराली है जिन्हें धर्म में श्रद्धा है उन के तो बड़े ही काम की यह पुस्तक है—कटक निवासी काश्मीरी पण्डित विहारी लाल संपादित—आद्धलू को लिखने से विनामूल्य यह ग्रन्थ दिया जाता है॥

वृक्षारोपण प्रणाली।

कलकत्ता काशी पुर कृषिशाला के स्वत्वाधिकारी बाबू हेमचन्द्र मित्र द्वारा संकलित यह पुस्तक ४ हिस्सों में है प्रत्येक हिस्से का ।=) मूल्य है कुल का १॥) है—पहिले हिस्से में कलम इत्यादि के लगाने का प्रकार और नियम; फल या फूलों के बड़ा करने की तदबीर आदि है—दूसरे भाग में फल वाले पेड़ों के लगाने की विधि है अंगरेज़ी तथा हिन्दुस्तानी यावत् फलों के पेड़ सबों का एक २ अध्याय में वर्णन है—तीसरे भाग में इसी तरह फूलों के पेड़ों का अलग २ वर्णन है; कोई फूल फल नहीं छुटे जिन का वर्णन इसमे न हो—चौथे भाग में बगीचे की ज़मीन आदि कैसी होनी चाहिये इसका बयान और मसाले के वृक्षों का वर्णन है—पुस्तक संग्रह के योग्य है और पढ़ने में मनोरंजक है॥

दूधार गाय।

दुधार गाय ऐसी ही हो जैसा हिन्दुस्तान है—मसल है "दुधार गाय के दो लात सहने होते हैं" पर यह गऊ उस किस्म की नहीं है कि लात मारै; दूध अपरिमित देती है जब और जितना चाहो मन मानता दुहो सूधी इतनी कि वे मुह की लात चलाना कैसा वंवांना तक नहीं जानती—गऊ क्या साक्षात् कामधेनु है "कामान्-दोग्धि कामधुक्" इस के कामधेनु पन का कहां तक बयान किया

जाय जैसीही देखनऊ; मोटी ताज़ी; वैसीही सीधी; बड़ी तोफगी इस बात की इस में है कि इस के खिलाई पिलाई में मालिक का एक पैसा नहीं खर्च होता—कितनेही अच्छे खेत की गऊ हो जब तक भरपूर रातिब न पावेगी कभी उतना दूध न देगी; यह अनोखा दुधारपन इसी में देखा जाता है कि इस के मालिक ने जंगल तक सब काट डाले जिस में और जहां तक अपना मतलब समझा हीरहीर एक भी न छोड़ा तौ भी यह बेचारी उतने पर भी सन्तोष किये रही—हम पहले कह आये हैं यह बे मुह की है; स्वामि भक्ति को निवाहते मालिक का जूठन जो कुछ मिला उतनेही से किसी भांत दग्धोदर को भरते मालिक को बराबर अमृत पान कराती जाती है—आस पास के कितने और लोग हाथ मलते हैं कि ऐसी कामधेनु हमे क्यों न मिली—हमे मिली होती तो हम अपने को परम धन्य मानते और उस काम दुघा की इतनी कदर करते कि आचन्द्रतारक हमारी कदरदानी संसार में एक उदाहरण रहती—काम धेनु तू इतनी दुधार क्यों हुई? दुधार भी थी तो इतनी सूधी न होती; यह सब तेरे तब बोदापन और सिधाई का फल है तब जो कुछ बे कदरी और कड़ाई तुझ पर हो सब सहने के सिवाय चारा ओर क्या है—मालिक की लहर बहर कदाचित् कभी तेरे दिन चेत ठठैं—इत्यलम् ॥

हिन्दीप्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन बायुसों मणिदीप सम थिर नहि टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २४ सं० ३।४ } प्रयाग { मार्च । एप्रिल सन् १९०१ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहाय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा सर्वसाधारण से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) ——०*०—— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज १=)

——:००:——

नमूने की कापी =)॥

१५-८-०१



हिन्दीप्रदीप

जि० २४ सं० ३।४। } प्रयाग { मार्च एप्रिल सन् १९०१ ई०

दान की जुदी २ प्रणाली।

नई सभ्यता हमारी हर एक बातों में टांग अड़ाती हुई दान के क्रम को भी उसने न छोड़ा; पुराने क्रम के लोग दान इस शब्द को सुनतेही समझ लेते हैं कि कुशा और जल हांथ में ले किसी ब्राह्मण देवता का श्रद्धा पूर्बक पांव धो तिलक चन्दन माला फूल से विधिवत् उस की पूजा कर अति दण्डायमान् संकल्प पढ़ कर जो दिया जाय वह दान है–इन बेचारों को यह क्या मालूम कि नये क्रम में इस भांत कुछ देना निरा ढकोंसला हंसी की बात दंभ

और निष्फल तथा व्यर्थ है—अब इस नई सभ्यता में अव्वल तो दान उसी को कहेंगे जो चन्दे में दिया जाता है; वह चन्दा सर्कार की किसी बात का हो तो बहुत अच्छा क्योंकि गवर्नमेंट के यहां सुर्खरुई हाकिमों की खुशनूदी और अन्त में दो एक हर्फ़ की उपाधि की प्राप्ति उस दान का सद्यः फल मिल जाना सुलभ हो जाता है—इस तरह का दान तो महादान है—उपदान में यह भी सही कि किसी ने कोई देशहितैषी काम में आय गला दबाया तो लाचार हो नांक भौं सिकोड़ते उसमें भी कुछ लिख देना पड़ा; पर निश्चय रक्खो यह दान उस किस्म का नहीं है जिस्का सद्यः कोई महाफल मिले न कर्मचारियों के चित्त में ऐसे दानी की उदारता का कुछ असर पहुंचता है—हां समाचार पत्र वाले अलबत्ता बन में मोर के नाचने के समान गा उठते हैं और कालम के कालम झूठी सच्ची तारीफ़ से भर देते हैं—लूले लंगड़े अन्धे अपाहिजों को देना भी नई सभ्यता दान मानती है; दान का नया क्रम क्या है सो तो हमने कह सुनाया अब पुराने क्रम में दान की जो कुछ फज़ीहत है उसे भी कहते हैं—

अपने दान से संसार में हम प्रसिद्ध हो रहे हैं; हमारे समान दान शील उदार दूसरा कौन होगा; जिस्के द्वार से आज तक मंगता विमुख हो गयाही नहीं; कंगाल परम दरिद्र के मन की अभिलाषा पूरे देने को हम मानो कल्पवृक्ष हैं; अहंकार से भरे हुये इस तरह के दान को दर्पदान कहेंगे और इसका क्या फल है सो हमारे पाठक अनुमान कर लें—संसार में हमारा यश फैले हम बड़े उदार और दानी कहलावें इस खयाल से अपनी तारीफ़ पर रीझ कुछ देना मानो धन दे यश खरीदना है; दानकाहे को हुआ वित्त और यश का क्रय विक्रय है—अभाग्य वश ज़बान से कहीं निकल गया कि तुम को यह वस्तु देंगे; मंगता अर्थी यह समझ कि कह चुके हैं तो देहींगे दरबारदारी करते २ और दीनता

की मुद्रा से मांगते २ थक गया और इतना घेरा कि लाचार हो देना पड़ा; दान क्या याचक को भीख का देना है जिस दान का समावेश ब्राह्मणों ने अपनी पोथियों में अधम के नाम से किया है "अधमंयाच्यमानं स्यात्"-मंगता आशाबद्ध हो दिन रात सेवा टहल करते २ घिस गया और देने वाले ने सोचा दान का दान और एहसान का एहसान है; इस निष्फल सेवा दान से क्या "सेवादानं च निष्फलम्"-एक दान कहर सूम का होता है जिसमें क्रूरी भक्ति तो बहुत प्रगट की जाती है पर लेने देने में केवल राम का नाम मात्र; बहुत बड़ा आडम्बर रच माला फूल तिलक बड़ी भक्ति से लगाय अति बिनीत भाव से ऐसा झुक के साष्टांग दण्डवत् की कि प्रतिग्रह लेने वाले ने यही समझा कि बस अब हम सदा के लिये अयाचक हुआ चाहते हैं; अब हम को पुनः प्रतिग्रह लेने का पाप न लादना होगा; पर अन्त को जहां रुपये और अशरफियों की आशा थी वहां काकिणी हाथ लगी तब मुह बाय कहने लगे पराये पूत से पैसा निकालना बड़ा कठिन काम है-दान पात्र दो कैंडिडेट हैं जिन दोनों में दान लेने की एक सी योग्यता है न चावल भर एक घट के न दूसरा चावल भर बढ़ के है पर दानी कुछ ऐसा ईर्ष्यालु राग द्वेष पूर्ण है कि जिस्से उसे प्रेम है उसका अपने दान से उसने घर भर दिया और जिस्से द्वेष है उस को नितान्त आशा भंग होना पड़ा; दान क्या है राग और द्वेष के प्रगट करने का इश्तिहार है-एक बन्ध्य दान भी है "मुई बछिया बाह्मन के हेत" इस कहावत के अनुसार जिसे समझा कि यह अब हमारे किसी काम का न रहा किसी को दे निहोरा और एहसान क्यों न लेलें "एका क्रिया द्विअर्थकरीप्रसिद्धा" पुण्य का पुण्य एहसान घेलौना में-लेने वाले ने भी समझा "दान की बछिया के दांत नहीं देखना होता"-"भागे भूत की लंगोटीही सही"-ऊसर में अच्छे बीज फेंक देने के समान एक दान वह

है कि दानी को न श्रद्धा है न भक्ति अनेक झिड़की और घुड़की के साथ दान पात्र का बड़ा अनादर करते दिया थोड़ा कहा बहुत-यथार्थ में जिसे दान कहते हैं वह यह है-

" परार्तिशमनं वित्तमज्ञातमनुदीरितम् ।
अफला कांक्षयायुक्तं प्रयात्यल्पमनल्पताम् " ॥

जो धन दूसरे की पीड़ा दूर करने को दिया जाय और जिसका दान यहां तक गुप्त हो कि कोई न जाने ; फल की बासना या किसी तरह की कांक्षा न रख दिया जाय ऐसा थोड़ा भी दिया गया बहुत और असंख्य है-या इसे दान कहते हैं कि देश काल पात्र जो दान के क्रम में गिनाये गये हैं उनका किंचिन्मात्र खयाल न कर किसी दुखी को दीन दशा में देख उसकी दीनता दूर करने को दिया जाय; निःसन्देह यह बड़ा श्रेष्ठ दान है-

एक दान यह है कि चाहे केवल मूठी भर अन्न हो किन्तु फलाभिसन्धि का उसमें अन्त नहीं कितनी बढ़ा दी जाती है तद्यथा "ममेहजन्मनि जन्मान्तरेवा सकलदुरितक्षयनिरसन तथाच पुत्रपौत्रादि वृद्धिपूर्बकसकुटुम्बपरिबारस्यआयुरारोग्यसमस्ताभ्युदयवृद्धये इत्यादि"-फल की आकांक्षा रख मेरु तुल्य दान भी तृण समान है; श्रद्धा सुधा पूरित हो किसी दुखी को दुःखित दशा में देख दया का भाव मन में लाय तृण तुल्य भी कुछ देना स्वर्ण पर्वत के दान सदृश है-स्वस्ति वाचन और शान्ति पाठ करने वाले पुरोहित गुरू या आचार्य को जो देना है वह एक प्रकार का भृतिदान अर्थात् उन के मज़दूरी का वेतन है-इत्यादि दान के प्रकरण में पुरानी और नये क्रम की जो कुछ प्रणाली है दोनों को हमने दिखलाय दर्पण सदृश कर दिया अब कौन प्रकार का दान अच्छा है सो पाठक वृन्द ते कर लें-

रूपक।

उपमा के उपरान्त कवियों ने अर्थालंकार में दूसरा बड़े काम का अलंकार इसेही निश्चय किया है जिसे एक प्रकार की छिपी हुई उपमाही कहेंगे; जैसा बाहुलता, पाणिपद्म, चरणपल्लव इत्यादि–दण्डी ने काव्यादर्श में ऐसाही लिखा भी है–

"उपमैव तिरोभूतभेदारूपकमुच्यते।
यथा बाहुलता पाणि पद्मं चरणपल्लवः"।

ऐसाही मुख पद्म, अंगयष्टि, मनोमुकुल, विद्युल्लता, मेघमाला, कम्बुकण्ठ, अधरपल्लव, अधरामृत, भालपट्ट, नेत्रोत्तत्पल, भ्रू लता इत्यादि अनेक ऐसे शब्द या बाक्य हैं जिनमें दोही पद हैं पर अर्थ की गंभीरता का प्रकाशक अलंकार उन्में भरा हुआ है इस लिये वे वाक्य कवियों के बड़े काम के हैं–इन बाक्यों का अर्थ यह हुआ "मुख क्या है मानो पद्म है या मुख रूपी पद्म अथवा पद्म के रूप में मुख या पद्म सदृश मुख" ऐसाही लम्बाई और कोमलता आदि गुणों का आरोप बाहु में किया गया है; योंही पल्लव का पाणि में; यष्टिका अंग में; मुकुल अर्थात् कली का मन में लता का विद्युत् में इत्यादि–कवियों के लिये यह रूपकालंकार ऐसा भारी शस्त्र है जिस्से वे अकाश को पाताल कर दे सक्ते हैं–केवल संस्कृत के कवियों ने इस का प्रयोग किया हो सो नहीं अंग्रेज़ी में यह "मिटाफर" के नाम से प्रसिद्ध है–कवियों के वर्णन में यह रूपक जिस तरह पर निबाहा गया है उसका कुछ थोड़ा सा उदाहरण यहां पर उध्रित करते हैं...

"अंगुल्यः पल्लवान्यासन्कुसुमानि नखार्चिषः।

बाहूलते बसन्तश्रीस्त्वंनः प्रत्यक्षचारिणी" ॥

इस श्लोक में नायिका के अंग में बसन्त की शोभा का आरोप किया गया है; किसी नायिका के प्रति कोई कहता है "तेरी दोनों बाहुलता स्वरूप हैं; हांथ की अंगुलियां जिस्में पत्ते हैं, नाखूनों की चमक मानों उस लता में फूल फूल हुये हैं; तो तू मेरे लिये चलती फिरती हुई बसन्त की शोभा है" दण्डी ने काव्यादर्श में इस तरह के कई एक और भी उदाहरण दिये हैं—

"ताम्रांगुलिदलश्रेणिनखदीधितिकेसरम् ।
ध्रियते मूर्न्धि भूपालै र्भवच्चरण पंकजम्" ।

राजा लोगों से आप का चरण कमल सिर पर धारण किया जाता है जिस चरण की लाल अंगुलियां मानों कमल की पंखुरियां हैं नह की चमक उसके पराग हैं—

" गाम्भीर्येण समुद्रोसि गौरवेणासि पर्वतः
कामदत्वाच्च लोकानामसि त्वं कल्पपादयः" ।

गाम्भीर्य में तुम समुद्र हो ; गुरुता में पर्वत सदृश हो ; लोगों के मन की कामना पूरन कर देते हो इस्से कल्पवृक्ष हो—इसमें समुद्र पर्वत और कल्पवृक्ष का आरोप एकही में किया गया है—

" मदरक्तकपोलेन मन्मथस्त्वन्मुखेन्दुना ।
नर्तितभ्रूलतेनालं मर्दितुं भुवनत्रयम् " ॥

नव यौवन के मद से जिस्के कपोल लाल हो गये हैं; कटाक्षपात

से भृकुटी जिसमें नाच रही हैं; ऐसे तुम्हारे मुख रूप चन्द्रमा की सहायता पाय जगत् भर के प्राणी मात्र के मन को मथने वाला कामदेव तीनों भुवन को मर्दन कर सक्ता है—

काव्य प्रकाश में मम्मट भट्ट ने रूपक का यह लक्षण दिया है—"तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः" उपमान और उपमेय अर्थात् जिसकी उपमा दें और जिस्से उपमादें दोनो में भेद का न होना रूपक है "रूपयति ऐकतां नयति इति रूपकम्"—

वाग्भटा लंकार में रूपक का यह लक्षण दिया है—

"रूपकं यत्र साधर्म्यादर्थयोरे भिदाभवेत् ।
समस्तं वा समस्तं वा खण्डं वा खण्ड मेव वा" ॥

जहां उपमान और उपमेय दोनों में भेद न रहे वह रूपक है; सो चार प्रकार के हैं समस्त असमस्त खण्ड और अखण्ड—चारों के एक २ उदाहरण दिये हैं—पहिले उदाहरण में निशामें पिशाची का रूपक बांधा है—

"कीर्णान्धकारालकशालमाना निवद्धतारास्थिमणिः कुतोपि ।
निशा पिशाची व्यचरद्दधाना महान्त्युलूकध्वनि फेत्कृतानि" ॥

दूसरे में यह दिखलाया कि संसार रूप कुआं में डूबते हुओं को निकालने के लिये हरि धर्म रस्सी सदृश है—

संसार एषकूपः सलिलानि विपत्ति दुःखजन्मानि ।
हरिधर्म एवरज्जुस्तस्मा दुद्धरति निमग्नान्" ॥

तीसरेमें नायिका के प्रत्यंग का वर्णन बड़ी कविता के साथ किया गयाहै

"अधरं मुखेन नयनेन रुचिं सुरभित्वमब्जमिव नासिकया ।
बरवर्णिनीबदनचन्द्रमसस्तरुणरसेन युगपन्निपपुः" ।

चौथे में चन्द्रोदय का बर्णन रूपक में बहुत अच्छा किया गया है–

"ज्योत्स्नया धवलीं कुर्वन्नुर्वीं सकुलपर्वताम् ।
निशाविलासकमलमुदेतिस्म निशाकरः" ॥

जगन्नाथ पण्डित राज ने रस गंगाधर में रूपक के ये उदाहरण दिये हैं–

" बुद्धिर्दीपकला लोके यया सर्बं प्रकाशते ।
अबुद्धिस्तामसीरात्रिः यया किंचिन्नभासते" ॥

संसार में बुद्धि ऐसा दीपक है जिस्से सब कुछ प्रकाशमान हो जाता है–मूर्खता महा अन्धकार पूरित काली रात्रि है जिस्से कुछ नहीं देख पड़ता–

" काव्यं सुधारसज्ञानां कामिनां कामिनी सुधा ।
धनंसुधा सलोभानां शान्तिःसन्यासिनां सुधा" ॥

रसिक को काव्य अमृत है ; कामी को कामिनी सुधा है; लोभी को धन और सन्यासी को शान्ति सुधा है–

"आनान्दमृगदावाग्निः शीलशाखिमदद्विपः ॥
ज्ञान दीपमहावायुरयं खलसमागमः" ॥

खल का समागम आनन्द रूप मृग के झुलसाने को दावाग्नि है ; शील के वृक्ष के उखाड़ने को मतवाला हांथी है ; ज्ञान प्रदीप के बुझा देने को प्रचण्ड झंझा बायु है–

"कारुण्यकुसुमाकाशःशान्तिशैत्यहुताशनः ।
यशःसौरभ्यलशुनःपिशुनःकेनवर्ण्यते" ॥

दुर्जन करुणा का मानों खपुष्प है ; शान्ति रूप शीतलता के नाश करने को अग्नि है ; यश की सुगन्धि के दूर करने को लहसुन है— "कुंकुमद्रवलिप्तांगः काषायवसनोयतिः—कोमलातपवालाभ्रः सन्ध्या कालोयमागतः"—इस श्लोक में यती का आरोप सन्ध्या काल में बड़ी कविता के साथ किया गया है—

"मीनवती नयनाभ्यां करचरणभ्यां प्रफुल्लकमलवती ।
शैवालिनीचकेशैःसुरसेयं सुन्दरी सरसी" ।

नायिकामें सरसी "तलैया" का आरोप इस श्लोक में किया गया है— तालाव में मीन होते हैं सो इसके दोनों नेत्र मानो मीन हैं ; हांथ और पांव फूले हुये कमल हैं ; इसके केश वही मानो सेंवार है सुरसयुक्त यह सुन्दरी मानो अच्छा "रस" जल वाली सरसी है—भर्तृहर के शृंगार शतक में इसी के समान यह श्लोक है जिस में नायिका के अंग में ग्रहों का आरोप किया गया है—

"गुरुणा स्तनभारेण मुखचन्द्रेण भास्वता ।
शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां रेजे ग्रहमयीव सा" ॥

"कृपया सुधया सिंच हरे मां तापमूर्च्छितम् ।
जगज्जीवन तेनाहं जीविष्यामि नसंशयः" ॥

संसार की आधि व्याधि रूप ताप से मूर्च्छित मुझे हे हरे तुम अपनी कृपा रूप सुधारस से सींचो ; हे जगत् भर के जीवन दान नेदे

वाले उस से हम जो उठेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है—"पंचशाखः प्रभो यस्ते शाखा सुरतरोरसौ—अन्यथा नेन पूर्यन्ते कथं सर्वमनोरथाः" दान की प्रशंसा में राजा के हाथ की कोई तारीफ करता है हे प्रभो ५ अंगुलियां जिसमें मानो ५ छोटी २ डालियां हैं ऐसा यह तुम्हारा हाथ निश्चय कल्पवृक्ष की एक शाखा है ऐसा न होता तो क्योंकर सब लोगों का मनोरथ इसके द्वारा पूर्ण होता—

"तिमिरं हरन्ति हरितां पुरःस्थितं तिरयन्ति तापमथतापशालिनाम्"
वदनत्विषस्तव चकोरलोचने परिमुद्रयन्ति सरसीरुहश्रियम्" ॥

हे चकोर नेत्र वाली तेरे मुख में चन्द्रमा का सम्पूर्ण आरोप है इस लिये कि तू अपने मुख की दमक से दिशाओं का अन्धकार दूर करती है; कामाग्निसन्तप्त का तेरे दर्शन मात्र से ताप हर जाता है; चन्द्रोदय में कमल मुंद जाता है सो यह भी कमल की शोभा को हरे लेता है—ऐसाही शृङ्गार तिलक का यह श्लोक है—

"प्रविश झटिति गेहे मा बहिस्तिष्ठ कान्ते ग्रसनसमयवेला वर्तते शीतरश्मेः । तव मुखमकलंकं वीक्ष्य नूनं स राहुर्ग्रसति तव मुखेन्दुं पूर्णचन्द्रं विहाय" ॥

रूपकालंकार के साहित्य दर्पण में ये दो श्लोक अच्छी कविता के हैं—

"निर्माणकौशलं धातुश्चन्द्रिका लोकचक्षुषाम् ।
क्रीड़ामृगमनंगस्य सेयमिन्दीवरेक्षणा"
सौजन्याम्बुरुहस्थली सुचरितालेख्यद्युभित्तिर्गुणज्योत्स्नाकृष्ण
चतुर्दशी सरलतायोगश्वपुच्छच्छटा । यैरेषापि गुणाशया

कलियुगे राजाबली सेविता तेषां शूलिनि भक्तिमाऽत्रसुलभे सेवा कियत्कौशलम् ।।

पहिले में नायिका के सौन्दर्य का वर्णन दूसरे में राज सेवा की बुराई देखाई गई है–

कुवलयानन्द में जो रूपक के उदाहरण हैं उनमें श्रीहर्ष की रत्नावली नाटिका का यह श्लोक बहुत उत्तम है–

किंपद्मस्य रुचिं नहन्ति नयनानन्दं विधत्ते नकिं वृद्धिंवाभ्कषकेतनस्यकुरुते नालोकमात्रेण किम्। वक्त्रेन्दौ तव सत्ययंपदपरःशीतांशुरुजृम्भते दर्पस्यादमृतेन चेदिहतवाप्यस्त्येव बिम्बाधरे" ॥

इसमें नायिका के मुख चन्द्र के मुकाबिले वास्तविक चन्द्रमा में अरुचि अच्छे ढंग से दिखाई गई है–

अचतुर्वदनोब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः । अभाललोचनःशंभुर्भगवान्बादरायणः"

कमी होने पर भी रूपक के द्वारा उपमान में विशेषता इसमें दिखाई गई है–

तीसरा श्लोक नैषध का रूपक का बहुत अच्छा उदाहरण है–

" किमसुभिर्ग्लपितैर्जडमन्यसे मयि निमज्जतु भीमसुता मनः ।
मम श्रुतिमाह तदर्थिकां नलमुखेन्दुपरां विबुधःस्मरः" ।।

अंगरेज़ी में मिटाफर का लक्षण भी ठीक ऐसाही बांधा है—

A Metaphor is founded on the resemblance which one object bears to another; and differs from a Simile only in being expressed in a shorter

form generally in one word without the signs of comparision like or as; thus Chatham was designated the bulwork of the state; here bulwork designed for Chatham used Metaphorically.

नीचे की लाइनों में मिटाकर समय और नदी के प्रवाह के साथ अच्छा निबाह है

The lapse of time and rivers is the same,
Both speed their journey with a restless stream:
The silent pace, with which they steal away,
No wealth can bribe, no prayers persuade to stay:
Alike irrevocable both when past,
And a wide ocean swallows both at last.
(Though each resembles each in every past,
A difference strikes at length the musing heart,)
Streams never flow in vain; (where streams abound
How laughs the land with various plenty crowned)
But time, that should enrich the noble mind,
Neglected, leaves a dreary waste behind.

—*Cowper*.

आना और जाना ।

कहावत है "आया है सो जायगा राजा रंक फकीर" सच पूंछो तो संसार और है क्या? इसी आने और जाने की समष्टि—जब तक यह आना और जाना लगा है तब तक हम इस संसार सागर में डूबते उतराते रहते हैं; इस्से छुटकारा पानेही का नाम मुक्ति या परम सुख लोगों ने निश्चय कर रक्खा है—हम ऐसा निश्चय करने वालों की भोंड़ी अकिल को क्या कहैं जिन्होंने इसे सुख की अन्तिम सीमा माना है—दीपक की टेम सा जब तक हमारा अस्तित्व या वजूद बना है यह आवा गमन अवश्य है; टेम के बुझ जाने समान अस्तित्व का न रहना बौद्ध दर्शन के अनुसार जो निर्वाण है

सुख क्योंकर हुआ ? एक बस्तु विद्यमान है उसका मिट जाना या नेस्तनाबूद हो जाना जो सुख है तो लाचारी है—अस्तु आज इस आने जाने का कुछ बिबरण हम अपने पढ़ने वालों को सुनाया चाहते हैं—जिस समय पिछले के जाड़ों में सरदी खूब ज़ोर पकड़े रहती है ऊनी कपड़े या पांच सेर रूई से तन ढांपे रहो तौभी मारे जाड़े के दांत किटाकिट बोलते हैं यही जी चाहता है दहन मण्डल में लीन हो जांय या किसी अग्नि के कुण्ड में जा छिपैं—राम राम कर किसी तरह माघ पूस की कड़ी शीत के राक्षसी दिनों से प्राण बचे जाड़ा गया धीरे २ गरमी गौने की नई आई बहू सी घूंघट खोलने लगी—थोड़े दिनों तक तो ऐसी सोहावनी लगी कि सब लोग बड़े चाह से आय २ मिलने भेटने लगे ; हौले २ यह गरमी अत्यन्त लाड़ प्यार से सिर चढ़ी बहू सी इतनी प्रखर हो गई कि दिन रात पसीने में तरा बोर जी उकताने लगता है ; रेल की इनजिन सी लू अंग झौंसाये डालती है कभी को तो जी ऐसा घबराने लगता है कि बिकलता में आय चित्त में कुछ ऐसा पागलपन आसमाता है कि खयाल के टट्टू को सरपट शिमला सपाटू के ओर भगा ले जांय और वहां बर्फिस्तान की हवा इसे खिलावें तो चैन पावें-ज़िन्दगी उभारू और जीवन अपाढ़ करते ज्यों त्यों गरमी भी गई बरसात आई गगन मण्डल में भ्रमण करती घनघटा अवनितल में बिहारिणी मनोहारिणी बन उपबन के हरियाली की डह डही छवि की छटा देख मन मुदित हो मोर सा नाचने लगा—जैसा नशा उतर जाने पर होश आता है वैसाही ग्रीष्म के सन्ताप की मुसीबतों का हमला जब जाता रहता है तब तरावट का ज़ोर आता है—सुतराम् संसार का यह एक क्रम अनादिकाल से चला आता है कि एक जाता है दूसरा आता है—हिन्दुस्तान से रुपया जाता है बदले में लोहा लक्कड़ आता है ; अंग्रेज़ी पढ़ने से

जेहालत जाती है इन्‌लइनटेन्‌मेंट आता है ; वेदान्त के अनुशीलन से अविद्या जाती है ज्ञान आता है ; रात जाती है दिन आता है ; सकल सुख की खान जवानी गई बुढ़ाई आई ; दुनिया की हिर्स हवा गई शान्ति आई परमार्थ चिन्तन में तत्पर हुये–संपति चली गई कुमति आई हित को अनहित मानने लगा भलाई को बुराई–"जहां सुमति तहां संपति नाना, जहां कुमति तहां विपति निदाना"–इत्यादि प्रकृति का कुछ ऐसा नियम है कि वह सदा सब को चिरस्थायी और एकही ढंग पर नहीं रक्खा चाहती जो आज राज राजते हैं कल उनका सब राज पाट न जानिये कहां बिलाय जाता है गरीबी के पंजे में आय दाना २ भीख मांगने लगते हैं–इत्यादि इस आने और जाने में प्रकृति का क्या गुप्त भेद है क्यों ऐसा होता है कुछ समझ में नहीं आता–

मंत्र कलाप ।

हमारे बालक पांचही वर्ष की उमर से गुरू जी के पास बारह खड़ी घोखना आरम्भ कर देते हैं पर इस बात को गुरूजीही नहीं जानते हैं तब बेचारे लड़कों की कौन कि वर्णमाला के एक२ अक्षर महा मंत्र स्वरूप हैं जिनका उच्चारण तथा जप या पाठ न केवल सद्यः सब कामना सिद्ध करने वाला है बरन यह लोक परलोक दोनों को सुधार परम पद में लीन कर देता है–लो हम कहते जांय तुम याद करते जाओ–

कम्–काकिणी काकिणी के लिये तरसने वाले काहिली के प्रत्यक्ष स्वरूपेभ्यो कापुरुषेभ्यो नमो भारत बसिभ्यः–

खम्–खुदगर्ज़ी खुशामद इत्यादि भारत देवीभ्योनमः–

गम्–गोबर गनेश कश्मल कलेश पूरित पश्चिम उत्तर प्रदेश निवासिभ्यो हिन्दुभ्योनमः—

घम्—घाऊघप्प सर्वस्व निगल बैठने वाले घंटानाद कारिभ्योनमः—

चम्—चुंगी महा डाकिन्यैस्वाहा—अथवा चुक्कू में डक्कू लोटा में गड़गाप हूं फट्—

छम्—छिद्रदर्शिभ्यो गुणेविदोषद्रष्टृभ्यो नमो दुर्जनेभ्यः—

जम्—जौहरीभ्यो जमादारेभ्यो जमामारेभ्यश्च—

झम्—झांझ खंजरी धारिभ्यो वैरागिभ्यः—

टम्—टिकटकलेक्टरेभ्यः अथवा टिड्डागाम् की चटनी चाट केभ्यो निपट मूर्खेभ्यः—

ठम्—ठंठगोपालेभ्यो ठसक धारिभ्यो ठगी कर्म निपुणेभ्यश्च—

डम्—डिगरीहोल्डरेभ्यो, दरदर भिक्षायाचकेभ्यो डींग की हाकनेवालेभ्यश्च—

ढम्—ढोलक चिकाराभ्याम्—

तम्—तहसील दारान् तस्करवृत्तिभ्यः, उत्कोचप्रियेभ्यश्च—

थम्—थानेदारान्—

दम्—दारोगान् अथवा कलि महाराज के प्रधान गणाय पूज्यत माय दंभदेवाय—

धम्—धूर्ताधिराजान् धिक्कारपात्रान्—

नम्—नर्तकीभ्यो हावभावकटाक्षैर्धनदुर्मदान्धान् शहर के धनियों को बन्दर बनाय नचानेवालीभ्यः—

पम्—पुलिसाधिकारीभ्यः ;पुरुषार्थविहीनेभ्योहिन्दुभ्यश्च—अथवा पर पुरुषरताभ्यःपुंश्चलीभ्यःपुंश्चलीपतिभ्यश्च—

फम्—फिरंगिभ्यः

बम्—बूट धारिभ्यः बाज़ार बासिनीभ्यश्चः—

भम्—भिखारिभ्यो हिन्दुस्तानिभ्यः—

मम्-म्युनिसिपल मेम्बरेषु स्वप्रतिष्टामात्रलुब्धकेषु कलट्टर साहब की हां में हां करने वालेषु-अथवा मोटेमञ्जमाड़वारिषुनतयःसमुल्लसन्तु-

यम्-यमदूतान् कांस्टेबिलीभूतान् प्रत्यक्षपिशाचरूपान्-

रम्-रेलगाड़ीभ्यः

लम्-लखनौआनाम्-लखठपतिभ्यश्च—

वम्-विलाइत के लौटे इंगलिसाइज़ड़हिन्दुभ्यः-

शम्-शाम्पेन सेवकानाम्-

षम्-षट् (शठ) शास्त्रिभ्यः—

सम्-सिविलाइजड़ानाम्-

हम्-हाईकोर्ट वकीलानाम्-हैटधारिणांच-

क्षम्-क्षयरोगग्रसित क्षत्रियाणाम्—

त्रम्-त्राहिमाम्त्राहिमामितिरटन्तीनांग्रहंग्रहम्टन्तीनांबालविधवा नामार्तनादं प्रतिबधिरकर्णानाम्

ज्ञम्-ज्ञानिनाम् (ब्रह्माहमस्मीतिवादिनामुभयतोभ्रष्टानां "तंत्यजेदंत्यजं यथा" इति अन्त्यजतुल्यानाम्-बयं सर्वे सर्वे कालं नमामः-शान्तिः शान्तिः शान्तिः-

नये प्रकार की प्रेत बाधा।

इस नई रोशनी के ज़माने में जितनी पुरानी बातें सब नित्य २ खारिज हो रही हैं उन की जगह नई २ ईजाद होती हैं और सब लोगों में कदर पाती हैं-इस क्रम के अनुसार प्रेत बाधा भी नई तरह की होनी चाहिये जिस्में नूतन वस्तु के प्रेमी हमारे नवाभ्युदयशाली नये केड़ों के मन में उसे स्थान मिले कि हां हकीकत में यह बाधा है-यह बाधा बाल्य बिबाह है जो हमारे बंशधर सुकुमार बालक बालि-

और रुखाई पर ध्यान न दें हमारी ओर से अपनी श्रद्धा कम न करैं—

चुंगी में बढ़ती।

पहले की अपेक्षा चुंगी अब इतनी बढ़ा दी गई है कि रोज़गारियों में बड़ी खलबली मच रही है; पहिले बीजक अर्थात् जिस भाव माल खरीदा जाता था उस पर चुंगी लगती थी अब बाज़ार भाव के हिसाब से लेने का हुक्म है—बीजक पर जो चुंगी ली जाती थी वही क्या कम थी जिस्से व्योपार करने वालों को उन के व्योपार में कुछ तत्वही न रहा—एक चुंगी दूसरा "वाटर टैक्स" पानी का महसूल प्रजा मात्र को महा पीड़ा दे रहा है; अब चुंगी में इस बढ़ती से और क्या होने वाला है—रोज़गारी इतना अधिक चुंगी का महसूल दे किसी तरह नहीं पनप सकते—दाल में नमक सा चुंगी हो तो किसी को न अखरै किन्तु जो निर्ख चुंगी की अब रक्खी गई है वह तो व्योपार का हीर खींचने वाली मालूम होती है—पतला मुनाफा जैसा इन दिनों रोज़गारियों को बच रहा है सब चुंगी में खिंच जायगा तो अब बच क्या रहेगा जिस्से छोटे मोटे रोज़गारी खरचा बरचा दे अपने बाल बच्चों को पालैंगे—पढ़ लिख लोग नौकरी पाने से महरूम हो रोज़गार की ओर बहुधा झुकने का मन करते थे सो उसमें भी ऐसी २ बाधायें देखी जाती हैं तो अब न जानिये लोग धूर फांक के रहैंगे क्या? हम लोग छोटे लाट साहब श्रीमान् ऐंटोनी मेगडानेल का नाम लेते निहाल होते और उन्हें असीसते थे अब श्रीमान् को यह क्या सूझा जो चलते चलाते अपने शासन में धब्बा लगा रहे हैं—न जानिये किस शैतान ने उक्त श्रीमान् का कान फूंका जिस्से हर तरह पर नेक नाम होकर अब बदनाम होते हैं—हम लोग जब उनके गुणों को याद करेंगे तो फूले न समांयगे; साथही जब यह इनका काम याद आवेगा तो आह की

सांस भरने लगैंगे—रोज़गारी इस नई निर्ख के न जारी होने की बड़ी फिकिर कर रहे हैं; म्युनिसिपेल चेयरमेन को अरज़ी दे रहे हैं; श्रीमान् को भी मेमोरियल देने की चेष्टा में लगे हुये हैं—उचित है श्रीमान् उनकी मेमोरियल पर ध्यान दे अपने शासन में यह कलंक न लगने दें—कहने को चुंगी लोकल टेक्स है इम्पीरियल टैक्स से अच्छा है पर यह केवल कहनेही मात्र को है गवर्नमेंट की इस्में इतनी दस्तन्दाज़ी है कि इम्पीरियल टैक्स से कुछ भी कम नहीं है—हाल में जो मरदुम-शुमारी की गई उस्से मालूम हुआ कि जन संख्या प्रत्येक नगरों की इतना अधिक नहीं बढ़ी बरन लखनऊ ऐसे कई शहरों की पहले से घटी हुई है किन्तु चुंगी करीब २ सब शहरों की पहले से बढ़ी हुई है—हम इलाहाबादही की कहते हैं कि यहां पहले चुंगी की आमदनी एक लाख ४८ हज़ार सालाना थी; उपरान्त १ लाख ६० हज़ार हुई; अब करीब २ पहले से दुगनी २ लाख नौ हज़ार चुंगी की आमदनी है—हम समझते हैं दूसरे साल इस नई निर्ख का क्रम जो जारी रहा तो अचरज क्या कि तीन लाख के ऊपर चुंगी की आमदनी बढ़ जाय—इलाहाबाद पर ईश्वर का कोप रहने से म्यूनिसिपेल कमिश्नरो में दो एक ऐसे सत्यानाशी प्रविष्ट हैं कि मरैं न माचा छोड़ैं—यह उन्हीं की दया है कि हर तरह की पीड़ा म्युनिसिपेलटी के बदौलत हम लोग भोग रहे हैं; शैतान की मानो एक दूसरी प्रतिकृति जिनका नाम ज़बान पर आ जाने से लोग कोसने लगते हैं और गालियों का सहस्त्र नाम सा पढ़ने लगते हैं—नहीं मालूम ऐसों के म्युनिसिपल कमिश्नर होने से लोगों का क्या उपकार है? हां हाकिमों को खुश रख अपना फ़ायदा करने का अलबत्ता उन्हें भरपूर मौका मिल रहा है—हम जानते हैं ऐसेही एक दो कोढ़ हर एक शहर की म्युनिसिपलटी में घुसे हुये हैं जिस्से म्युनिसिपलटी प्रजा के बीच बदनाम हो रही है—इस्में तो चुन २ कर ऐसेही लोग

काओं की कायिक तथा मानसिक दोनों प्रकार की शक्तियों को हानि पहुंचाते हुये यावज्जीव के लिये उन्हें बेकाम क्षीणसत्व क्षीणवीर्य कर डालती है—वह प्रेत बाधा तो किसी एक व्यक्ति या एक घराने में रहती है यह बाधा देश भर को छेंके है कोई जाति या फिरका नहीं छुटा जो इस बड़ी बला से मुस्तसना हो–कोई यंत्र मंत्र टोटका टमना ऐसा हुईनहीं जो ज़रा भी इस्पर असर पहुंचा सके—बाप मा के आंख का सुख इस्का निदान या मूल कारण है; कौन सी ऐसी तदबीर काम में लाई जाय कि उन की आंखही फूट जाय तो न रहै बांस न बजै बांसुरी–बाल्य विबाह इस महा प्रेत बाधा के कारण प्रति वर्ष न जानिये कितनी नई बाल विधवायें अपनी आह की फूत्कार से हिन्दू जाति को शाप देती हुई कामाग्नि की प्रबल ज्वाला में झुलस रहीं हैं तौ भी इस बला को सर्बथा निर्मूल करना कैसा वरन ज़रा भी अपना गला इस्से कोई भी नहीं छुटाया चाहते हैं अटल कुसंस्कार इसेही कहेंगे "किमाश्चर्यमतःपरम्"–उस महा पतित धूर्तशिरोमणि को हम क्या कहें; हे परमेश्वर उस्की क्या गति होगी जिसने अपने थोड़े से फाइदे के लिये हिन्दू जाति भर को छार में मिला दिया और अष्ट बर्षाभवेद्गौरी को वेद बाक्य सदृश माननीय कर डाला–अथवा हम उसे भी क्यों दोष दें दूर तक सोचो तो इस बुराई का कारण केवल अष्टवार्षा वाला बचन इतना नहीं नाशकारी है जितना हमारी हिन्दू जाति के स्वार्थान्ध बाप मा दोष दूषित ठहरते हैं–बहुधा देखा जाता है सम्पन्न से सम्पन्न लोगों ने भी लड़के का विबाह एक खासी तिजारत मान रक्खा है जिसके कई लड़के हुये उसके पास दरसनी हुंडी तैयार है–आतुर रहते हैं जहांतक जल्दी उस हुंडी को भुंजा डालें उतनाही अाच्छा–ऐसा भी देखा जाता है कि लड़के के बाप ने हज़ारों का माल दहेज में पाया कुछ दिनों तक खूब

गुलछर्रे उड़े जब पूत उनके बालिग और समर्थ हुये तो वहां ढांक के तीन पत्ते पाय कड़ाके पर कड़ाका और फांका कशी से गला छुटाय ससुराल की राह ली और वहां ज़रा भी जो सहाड़ा मिला तो ससुराल का टुकड़ा तोड़ते हुये येनकेन ज़िन्दगी के दिन पूरे किये और "पत्नीख्यातांधमाधमा" की पदवी के पूर्ण अधिकारी हुये-बाल्य विबाह नाटय शाला का यह हमने यहां पर एक दृश्य अपने पढ़ने वालों को दिखलाया ऐसे सैकड़ों प्रकार के चित्र हैं जितना कहिये' पल्लवित करते जांय-दूसरी बात इस बिबाह के सम्बन्ध में "अर्थोडाग्मा' है जिसकी रक्षा में चाहो गरदन कटजाय पर नाक न कटने पावै-सैकड़ों घराने लड़की के ब्याह के पीछे कर्ज़दार हो अपना सर्बस्व खो बैठे पर समाज में सुर्खरू रहे अपने कुल की परंपरा रीति और ब्योहार अदा करने से न चूके-जिन के कुल में अबतक बराबर सात वर्ष की कन्या व्याही गई है तो यह क्यों इसके विरुद्ध कर नाक कटावैं और धर्म में भी बट्टा लगावें-संपूर्ण आभिजात्य और कुलीनता का निचोड़ हम लोगों में इस समय अब इस विबाह में आ लगा है जिसके अनेक ऐसे २ दृश्य हैं कि उसके भी दिखलाने की यदि चेष्टा करें तो पेज का पेज रंग डालना कोई बड़ी बात नहीं है—फिर ब्राह्मणों का जाल नाड़ी बर्ग की गड़ना इस प्रेत बाधा का सब से बड़ा मुख्य अंग है जिस्से उपयुक्त दाम्पत्य होनेही नहीं पाता; जिस्का अन्त को परिणाम यही होता है कि एक सुशीला परम सुन्दरी को कोई महा खूसट राक्षस मिलता है और देव तुल्य नट नागर ऋषि सदृश आचरण वाले का महा कर्कशा कुरूपा चण्डी कलह कारिणी जन्म भर के लिये आय दामन पकड़ लेती है ; जिस्से उस बेचारे की ज़िन्दगी फीकी पड़जाती है इत्यादि इस महा बाधा के विविध रूप रङ्ग हम अपने पाठकों के सामने रख क्षमा मांगते हैं कि लेख के पिष्ट पेषण

साष्टाङ्ग प्रणाम किया उन्होंने आंखोंही से आशीर्वाद दिया और मुझे बैठने को इशारा किया यह देख कर मैं बहुत सन्तुष्ट हुआ—जब बाबा जी महाराज ध्यान से सुचित्त हुये तब मेरी ओर देख कर कहने लगे कहो बच्चा तुम्हारे देश का क्या हाल है मैंने भारत की जो दुर्दशा थी कह सुनाई—बाबाजी ने कुछ ज्ञान की बातें कह मुझे एक अजीब वायसकोप (Biouscope) दिखाने का वायदा किया—कुछ काल के उपरान्त उस महात्मा ने मुझे पश्चिम की ओर बहुत दूर पर जहां धुंधला बादल छाया हुआ था ध्यान लगाकर देखनेकी आज्ञा दी; थोड़ी देरतक देखने के उपरान्त मुझे अति विस्तीर्ण और भयानक पानी का ऐक समुद्र दिखाई देने लगा और एक धारा उसमें से फूटकर बहती देख पड़ी—महात्मा ने कहा पुत्र, यह धुंधला जल का समूह जो तू देखता है वास्तव मेंसमुद्र नहीं हैंवरन घोर विपत्ति का ढेर है और धारा जो तू बहती हुई देखता है यही (eternity) अनन्तकाल है—तब मैंने पूछा महाराज यह धारा जो बह रही है कहां से आती है और कहां पर गिरती है? क्योंकि इसके दोनों सिरे ऐसे धुंधले हैं कि मैं देख नहीं सकता—बाबा जीने उत्तर दिया कि समुद्र के इस हिस्से का नाम जो तू देखता है, समय है दोनों छोर इसके इस कारण धुंधले हैं कि कोई नहीं जानता कि यह समय कब से चला आता है और कहां पर इसका अन्त है—फिर बाबा जीने मुझ से ध्यान देकर देखने को कहा और आज्ञा दी कि जो कुछ तू देखे मुझ से कह मेरे देखने में ५ मिनट भी न लगे होंगे कि मुझे एक पुल दिखाई देने लगा जिसके दोनों सिरे अंधेरे में थे—इस पुल में मुझे करीब साठ कोठियों के दिखाई पड़ीं कई एक उन मे से अतिजीर्ण और गिरी हुई थीं—मैंने बाबा जीसे तुरन्त पूछा कि महाराज यह पुल कैसा है और यह कोठियां टूटी क्यों हैं? उन्होंने उत्तर दिया कि इस पुल का नाम आयु है और इन कोठियों का नाम वर्ष है बाबा जीने कहा कि पहिले इस पुल में कई

हज़ार कोठियां थीं परन्तु अब वे सब समुद्र के तूफानों से गिरकर इसी में डूब गईं हैं; जब और ग़ौर किया तो देखा कि बहुत से मनुष्यों के समूह उस पर होकर जा रहे; हैं देखतेही देखते कई एक मनुष्य उस पुल में हो नीचे बहती हुई धार में गिर गये और बेपते हो गये—उस पुल में जगह जगह नीचे की ओर खिड़कियां सी बनीं हुई थीं जो ज़ाहरा तौर पर नहीं दिखलाई देती थीं और जब कोई चलने वालों में से उन पर पहुंचता तो तुरन्त नीचे धार में गिर पड़ता और फिर उतराता न था ये छिद्र पुल के शुरू में बहुतही घने थे क्योंकि हज़ारों आदमी जैसेही अन्धकार से निकल कर पुल पर पांव धरते थे वैसेही नीचे गिरते हुये दिखाई देते थे—यह छिद्र पुल के बीच में कुछ कम थे परन्तु पुल के दूसरे सिरे पर तो सब के सब आदमी कितनाही सम्हल कर चलते थे पर गीरही पड़ते थे—

बहुत से आदमी बीच में कितनेही धक्के खाते पर अंत वाली कोठी पर पहुंचही जाते थे और वहां उन्हें मजबूरन गिरना पड़ता था—मैं इस दृश्य को देखकर अत्यन्त आश्चर्य में हुआ और मुझे यह देख कर बड़ा खेद और कष्ट हुआ कि बहुत से आदमी जो देखने में बड़े चंचल और खुशमिज़ाज मालूम पड़ते थे और जो अपने साथ अति सुन्दर और सजीली अबलाओं के हांथ में हांथ डाले जा रहे थे, जैसेही खुली हुई खिड़कियों के पास पहुंचते थे कि वेही स्त्रियां उनसे हांथ छुड़ा, टांग से ऐसा धक्का मारती थीं कि वे बिचारे बहुत यत्न करने पर भी नहीं बचते थे और धड़ाम से जल में गिर कर प्राण त्याग कर देते थे—थोड़े से आदमियों का अजबही हाल था यह कोट पतलून पहिने कोई कोई चशमा लगाये जेब में एक बालिश्त की पतली पोली सा लकड़ी जिसके एक सिरे पर चौड़ा पहिया सा लगा जेब में रखे थे जसको कभी कभी किसी मनुष्य के सीने पर लगाकर अपने कान में लगाते

होने चाहिये जो शिष्टता की कसौटी में कसे हुये हों; देशानुराग और परउपकार जिनके चेहरे पर बरस रहा हो; आत्मत्याग की जो मूर्ति हों—यही सब सोच विचार लार्डरिपन महोदय इसे आत्मशासन प्रणाली सेल्फ गवर्नमेंट की बड़ी भारी बुनियाद ठहरा गये हैं–रिपन महोदय का उद्देश्य तभी सफल भी हो सक्ता है न कि ऐसे लोगों से जैसा इन दिनों इस्में बहुधा भरे हुये हैं; जिन्होंने म्युनिसिपल कमिशनरी को अपनी प्रतिष्ठा और कर्मचारियों में अपना गौरव बढ़ाने का एक वसीला मान रक्खा है–अच्छे लोग जिनकी इमानदारी कांटों में तुली है सचाई के जो रूप हैं इसमें शामिल होते घिनाते हैं–इस्से तो हम यही निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि जहां गवर्नमेंट की ऊपर से आवरण रूप रक्खी चुंगी अक्सर और २ बातें हाथी के दाँत सी फुसलाने मात्र को हैं वहां इसे भी समझ लें–यदि म्युनिसिपलटी का काम अच्छी तरह होता जाय और लोगों को सुख मिलै तो हम निश्चय कहते हैं इस्की डेहुड़ी चुंगी भी किसी को न अखरै किन्तु सफाई इत्यादि के बहाने अनेक तरह की पीड़ा भी लोग सह रहे हैं और बहाने २ न मालूम कितने तरह का टैक्स भी देते हैं खेवा देते बहे जाना यही कहलाता है–म्युनिसिपलटी क्यों इतना खरचा बढ़ाये है कि इतनी आमदनी पर भी पूरा नहीं पड़ता कर्ज़दारी घटती नहीं चुंगी बढ़ाना पड़ा; कहावत है जितना ओढ़ना देखै उतना पांव फैलावे–अन्त में हम निवेदन करते हैं कि हम शुद्ध भाव से यह सब बक गये हैं कहीं पर यदि कुछ कटु हो गया हो तो क्षमा किये जांय हमने बहुत दिनों से ऐसे लेख लिखना छोड़ दिया है अब की बार बहुत लोगों के इसरार पर इसे लिखा है–

विचित्र (Scene) दृश्य।

बर्षाकाल में बहुधा लोग घूमने में और हरियाली का मज़ा लेने

में बड़े मग्न रहते हैं-अस्तु एक दिन रङ्ग बिरंगी घटायें आकाश में छाई हुई थीं, बीच बीच में बदलियां भी लाल भूरे श्याम वस्त्र धारण किये हुये आपस में कलोल कर रही थीं, मानो छुआ छुअउल कभी आंख मुदउनी का खेल करती हुई इधर उधर दौड़ रही थीं ; परन्तु जब ज्यादः शोर व गुल मचातीं व आपस में लड़ती थीं तब पवन आकर आपस में बीच बचाव करा देती थी और उन सभों को अपनी बहिन दामिनी के सिपुर्द कर देती थीं जो उनको आंखें दिखा कर और गर्ज कर यह कहती थी कि यदि तुम लोग न मानोगी तो मैं सूर्य्य नारायण के धनुषबाण से तुम लोगों को निर्मूल करा दूंगी-यह ताड़ना जब मेरे कान तक पहुंची तो बेबस हो मैंने आकाश की ओर देखा परन्तु देखतेही चित्त ऐसा बाग़ बाग़ हो गया कि मैं भी घूमने के लिये चल दिया-विन्ध्याचल तो पास थाही बस फिर क्या था जिधर से रास्ता पाया चढ़ कर एक ऊंचे शिखर पर पहुंच गया वहां के चारो ओर का दृश्य तो देखनेही योग्य था कहीं कहीं पर नदियां और झरने छोटे बच्चों की नाईं टेढ़े सूधे अथवा जिधर राह मिलती थी उधरही से खिसक कर जहां जी चाहता था जा रहे थे-इस मनोहर दृश्य को देख कर किस के जी में उसके बनाने वाले की याद न आवेगी मैं भी यही सोच रहा और इधर उधर देख रहा था कि अकस्मात् मेरी निगाह एक ऊंची चोटी पर पड़ी वहां मुझे एक मनुष्य का आकार देख पड़ा-मैं बड़ा हर्षित हुआ और उस महात्मा तक पहुंचने को ठान ली-जैसे तैसे पहुंच कर देखता क्या हूं कि एक बड़ा रमणीक मैदान है वहां लतायें वृक्षों ने मिलकर एक कोठरी सी बना रखी थी और एक महात्मा जिनकी जटाओं ने मानों उन्हें ओवरकोट पहना रक्खा था आंखें बन्द किये हुये ध्यान में बैठे थे ; थोड़ी देर बाद जब उन्होंने आंख खोली तब मैंने उन्हें

थें (टेथस्कोप) और एक पतली कांच की पुङ्गी सी जिसमें पारा भरा हुआ था और कुछ काला काला लिखा था निकाल कर लोगों के बगल में लगाते पर जब मौका पाते तो उन्हें गड़हे में ढकेल पुल के नीचे गिरा देते थे—और सुनिये कुछ लोग तिग्गी चौगोशिया जमाये छकलिया अंगरखा ग़रारेदार पायजामा पहिने लसर पसर करते हुये उसी पुल पर जाते हुये नज़र आये; यह जब किसी ऐसे आदमी को पाते जो उन कोट पतलून वालों के धक्के से बचा हो तो दौड़ कर मिज़ाज पुरसी करते और कलाई पकड़ कर कुछ टटोलते; थोड़ी देर बाद ऐसा झटका मारते कि गरीब दास नीचेही दिखाई देते थे—

हां २५ नम्बर की कोठी से ४० नम्बर की कोठी तक एक ख़ास तरह के Gentlmen इकट्ठे थे; यह लोग सब के सब लंबी दाढ़ी रखाये, ऊंची ऊंची गोलटोपी पहिने, महा दुर्बल, चेष्टा हीन, परन्तु साफ़ कपड़े पहने एक आपसही वाले मनुष्य की सेवा में मग्न थे; यहां तक की जब वह खास मनुष्य खा चुकता था तो उसकी जूठन को बड़ी प्रीत से भक्षण करते थे—इन को देखकर मुझे एकाएक हंसी आई तब बाबा जी महाराज ने मुझे डांट के कहा कि "हंस मत" इन पागलों का हाल तुझ से पीछे कहैंगे; अब तू पुल के ऊपर और कुछ दूर पर देख कि क्या दिखाई देता है और मुझ से कह; इतनी आज्ञा पाकर मैंने अपने सामने वाली सीन (Scene) छोड़कर ऊपर की ओर जो देखा तो हज़ारों गिद्ध, उकाब, चीलें और नाना प्रकार के दुष्ट पक्षियों के दल देखे; जो पुल के बीचो बीच में मनुष्यों को चारो ओर से घेरे हुये थे और उछल उछल कर चोंच मार उनकी खोपड़ी को गंजी किये डालते थे—पूंछने पर मालूम हुआ कि ये सब लालच, बैर, ईर्षा और क्रोध इत्यादि हैं जिनके मारे मनुष्य अपनी ऐन मध्यावस्था में पहुंच व्याकुल हो जाता है और उसे कुछ सूझ नहीं पड़ता—हाय! क्या इसी लिये ईश्वर ने इस

मिट्टी के पुतले को प्राण और बुद्धि दी है कि ऐसी २ तुच्छ और निकृष्ट वस्तुओं के वश हो अपने को ज़रा भी ख्याल न करे कि उस सर्व शक्तिमान् ईश्वर ने किस कारण मनुष्य के इस सुडौल शरीर को बनाया है- ज़रूर कोई तो सबब होगा जो मनुष्य को सब प्राण धारियों में उत्तम बनाया परन्तु नहीं उनका तो यह मत है कि "Eat, drink and be merry" "यहां तो आराम से गुज़रती है आकबत की खबर खुदा जाने" यानी अपने कर्म के हिसाब किताब का Accountant भी उसी अपने, कर्तार को बनाया-वाह! क्या अच्छा एवज़ दिया है-लेकिन याद रहे कि "बिया तो बोया बबूल का आम कहां से खाय" अन्त में वही यमराज की पुलिस के डंडे बदे हैं सो चखने पड़ते हैं-

जब मुझे ऐसी दुर्दशा में बाबा जीने देखा तो मुझे समझा के कहा कि हे पुत्र धैर्य्य धर निराश मत हो और उस अन्धकार की ओर देख जिधर यह धार जाकर गिरती है-मैंने ऐसाही किया पहिले तो कुछ न दिखाई पड़ा पर जब टकटकी बांधकर देखा तो धुंध भी कुछ कम होता मालूम पड़ा और साफ़ साफ़ दिखाई देने लगा-कि एक बहुत बड़ा बाग़ बना हुआ है जिसकी शोभा वर्णन करने के लिये चतुर्मुख ब्रह्मा भी शायदही समर्थ होंगे-उस बाग़ में ऐसी अनोखी सजधज के वृक्ष लगे हुये थे कि इस पृथ्वी पर नज़र नहीं पड़ते-उस बाटिका में रत्न जड़ित अत्यन्तही सुहावनी सजीली विश्वकर्म्मा की बनाई हुई एक बारहदरी बनी थी जिस में चतुर्भुज स्वरूप, श्याम-रङ्ग, पीताम्बर धारण किये, एक उपर्ना ओढ़े, आनन्द पूर्बक शयन कर रहे थे और एक स्त्री उनके चरणकमल की सेवा में ऐसी लिप्त थी कि उसे अपनी कुछ भी सुध नहीं थी-वहां जो मनुष्य इधर उधर देख पड़े उनका सा तेज व चमत्कार तो यहां दिखलाईही नहीं पड़ता सब लोग सुन्दरता की तो मानो मूर्तिही थे-इस कौतुक को देखतेही

देखते मेरी आंखों से अश्रुधारा ऐसे बेग से बही कि मैं अपने को रोक न सका; मुझ को रोमाञ्च हो आया और क्या कहूं मैं सब भूलकर उसी ओर ध्यानावस्थित हो गया कि न मालूम कितनी देरतक मैं ऐसी अवस्था में मग्न रहा; परन्तु मेरे मन्द भाग्य ने ऐसा ज़ोर किया कि मुझे एक छींक आई जो इस सब वृत्तान्त के पूछने को मुहफेरा कि वह महात्मा अन्तर्धान हो गये और मैंने अपने को एक मैदान में पाया—फिर कितनाही आंखें फाड़ फाड़ कर देखा न वह पहाड़ न समुद्र न वह महात्मा और न वह चतुर्भुज आकार चारो ओर मैंही मैं था—अब,जो दशा मेरी इस समय थी पाठक उसे स्वयम् अनुमान करलें

ब्र-मो-कूल

फेशन चरित्र।

कजली

करौं अब कैसो रे सांवलिया; फेशन कीन्हों बड़ अंधेर।
अंगरेजी पढ़ि साहब बनि गये; आई आफत घेर॥ करौं०॥
कोटबूट औ पैंट कहां लगि; गरफांसी को ढेर ॥करौं०॥
पीय मद्य मुख लाय लुआठी; वाक करैं चहुं फेर ॥ करौं०॥
जोय से घर में गिटपिट बोलत; लाये सामत हेर ॥करौं०॥
वाटर मांगें रोटी पावैं; तड़पतु हैं जनु सेर ॥ करौं०॥
बाहर तो कछु बन नाहिं आवे; घर में करैं अहेर ॥करौं०॥
सुमति दान दै सभ्य जनन को ; करो दया इक बेर॥ करौं०॥
भारत को पुनि श्रीस उबारहु; सुनो हमारी टेर॥ करौं०॥

हम दुखियन को वही रक्ष है; मासहु हमरो सोय। करौं अब कैसोरे ०।
जननी प्रेम धर्म की खम्भा ; सतवन्ती है जोय॥करौं०॥
देश धाम अरु धर्म वही है ; कार करैं सोइ लोय ।।करौं०॥
केहि अपराध लागि पुनि ईसुर ; धरो तनकि नहिं छोय॥करौं०॥
दिन २ दूनो दुःख बढ़त है ; सुखी लखात न कोय।।करौं०॥
हां अब हाल ख्याल में आयो ; चाल गई सबखोय ॥करौं०॥
कृषकन केर अन्नहू सबरो ; गयो देशान्तर पोय॥करौं०॥
मेन्चेस्टर औ डासन के घर ; दियो द्रव्य सब ढोय॥करौं०॥
बच्यो रह्यो सो लारी होटल ; धर्यो यत्न सो गोय ॥करौं ॥
जहां यज्ञ के धुंआं उठत हे ; चुरट धूम तहं होय।। करौं०॥
याही ते एहि सावनहू में ; उड़त धूर बिनु तोय ॥करौं०॥
"श्रीस" कहां लौं दुःख गिनावों ; हैं ये एक न दोय ॥करौं ॥
ह्यां तो सबै ब्रह्म बनि डोलैं ; दस्तगीर नहिं कोय ॥करौं ॥
या तें अब एहि देश उबारन ; ईश करै तो होय ॥ करौं० ॥

रमणीयता या रामणीयक।

संसार में प्रायः ऐसे मनुष्य बहुतही कम होंगे जो रमणीय वस्तु वा स्थान की इच्छा न रखते हों ; जिन का मन ऐसी वस्तु वा स्थान के अन्वेषण में प्रवृत्त नहीं रहता वेही मूढ़ शून्य हृदय या अन्धे कोठे के कहे जाते हैं–अचरज और पछतावा इस बात पर होता है कि रमणीय वस्तु के पाने को लोग उत्सुक रहते हैं और उसके मिल जाने

से उनके हृदय की कली अकस्मात् खिल जाती है; बहुधा इस बात की सूचना भी मिली है कि लोग इस अपने प्रयत्न में कहांतक कृतकार्य हुये हैं; परन्तु बास्तव में वह कौन बस्तु है जो रमणीयता के नाम से प्रसिद्ध है वा प्रत्येक बस्तु में वह कौन सी शक्ति है जो विदग्ध सहृदय मात्र के मन को अपनी ओर खींच लेती है? उसका कोई आकार है वा नहीं? इत्यादि के जानने को बहुतही थोड़े लोग हैं जो उद्योग करते हैं—अस्तु अब इन बखेड़ों को दूरकर यह बिचार करना चाहिये कि वस्तुतः यह रमणीयता कोई द्रव्य है या गुण है—किन्तु यह तो स्पष्ट है कि यह कोई द्रव्य नहीं है इसलिये कि द्रव्य पदार्थ में गन्ध रूप आकार आदि का होना बहुत आवश्यक है; जिनमें से इसमें एक भी नहीं पाये जाते—इसके अतिरिक्त रमणीयता बास्तव में यदि कोई द्रव्य होती तो काल चक्र के फेर में पड़ अबलौं कभी को अपना सब सौन्दर्य खो बैठती और सबों की नज़र से गिर भारत की संपत्ति समान प्रायः लुप्त हो गई होती—

अच्छा तो जो यह द्रव्य नहीं है; तो गुण है निःसन्देह यह गुण कही जा सकती है पर यह कौन सा गुण है और इसके रहने का कोई स्थान भी है? जिस्के उत्तर में मैं यही कहूंगा कि इसके रहने का कोई विशेष स्थान नहीं है—या यों कहिये यह स्थायी नहीं बरन चंचल है इसी से इसका मन के साथ इतना लगाव है; क्योंकि मन भी तो चंचल है तब क्या चोर २ मौसियायत भाई—यह अचिरस्थायी और चंचल न होती तो क्यों तारुण्य के आतेही "गर्दभीअपिअप्सरायते" और जब तक जवानी का आलम रहता है एक २ अंग का सौष्टव और सोहावनापन चुम्बक सा हमारे मन को खींचने लगता है—या हमारा मन मधुप स्वयं उसपर जा टूटता है—अथवा यों कहिये बसन्त के आने पर क्यों बिटप और लताओं के एक २ पत्तों पर वह यौवन उतर

आता है जो और दिनों में अमृत के घड़े से सींचने पर भी नहीं आ सकता; और अचिरस्थायी इतना कि वेही पेड़ और लता चाहो कैसे कटीले रहे हों जो पहिले बिटप और बेल या बल्ली की उपाधि पाये थे बसन्त के बीतजाने पर अब रूख या झाड़ झंखाड़ कहलाने लगते हैं और पहले का रामणीयक या सौन्दर्य अब उन में कहीं नाम को भी नहीं रहता–

हम ऊपर कह आये हैं रमणीयता और मन का चोर२ मौसयाइत भाई का सा सम्बन्ध है तो अब इन चोरों का पकड़ना तो बड़ा कठिन जान पड़ता है–अच्छा तो "शठस्यशाठ्यम्" इस नीति के अनुसार चलो हम भी आज इनके साथ वैसाही कुटिलाई की चाल चलें देखें ये दोनों कब तक लोखर खन्द खेल बचते हैं–पाठक चलिये हम लोग अब मिस्टर "मोनोटनी" (ऊब) का आश्रय लें और तब इन चोरों के भेद का पता लगावें इसलिये कि यह ऊब रमणीयता की सर्वथा प्रतिपक्षी है—गुण तथा व्योहार या बर्ताव में विभिन्नता होने से परस्पर वैमनस्य होता है और प्रत्येक के स्वभाव में अन्तर होने से गुणो में भी भेद पड़ा करता है; अतः यदि एक का पता पाके हम सब भेद जान लेंगे तो दूसरे की सब कलई आपही आप खुल जायगी–

लो हम लोग अब मिस्टर मोनोटनी के समीप आ गये देखो वह विकराल मूर्ति जो ताड़का की देह सी आगे पसरी हुई देख पड़ती है उसी की है; इस मूर्ति के गढ़ने वाले की चतुराई ध्यान करने लायक है कि जिसने इसे स्थापित करने को ऊषरही को उचित स्थान समझा जहां डहडही हरियाली की कौन कहै घास तक नहीं उगती; एक सा सरपट मैदान पड़ा है न कहीं फुट आध फुट ऊंचा न कहीं नीचा; वह देखो कैसे बड़े २ अक्षरों में मोनोटनी महाशय ने अपना माटो बना रक्खा है—

"न शादी दाद सामाने न ग़म अफ़ज़ूद नुक़साने।
बपेशे हिम्मते माहरचेःआमदबूद मेहमाने"॥

यह मत समझो कि रमणीयता के समान यह अचिरस्थायी है बरन सदा से ये ऐसेही हैं और सदा ऐसेही रहेंगे ऐसा न होता तो आप "ऊब" इस नाम से क्यों पुकारे जाते–"गरमी आवै जाड़ा जाय–मेघहु बरस २ पछितांय–पर हम बढ़ैं घटैं ना कबही–याही विधि जग जीतन चहहीं"–इन्हीं की गुप्त मूर्ति छोटे बालकों को डरवाय उन्हें पाठशाला में अनुपस्थित करा देती हैं–इन्हीं के दर्शनों से हमारी कुलाङ्गनायें व्याकुल हो कलह के चरखा के ओटने का बेग बढ़ाती हैं जिसके बढ़जाने से बन्धुस्नेह कच्चे धागे सा टूट एक घर का दो घर हो जाता है–

अस्तु अब इसके दर्शनही से आप रमणीयता देवी की हुलिया जान गये होंगे; लीजिये यदि नहीं तो अकस्मात् उन्ही से आप का साक्षात्कार हो गया; देखो कोमलता माधुर्य और परिवर्तन शीलता की झलक उनके प्रत्येक अंग से आ रही है; उन को देखतेही मन कैसा प्रमुदित हो गया "या तन की झाईं परे हरित श्याम द्युति होत" देखो ध्यान धरो उन के कोमल अधर पल्लवों से कुछ मधुर मधुर शब्द मानो निकल रहे हैं–हां सुना! अरे वह तो हमी को लज्जित करती है देखो कहती है कि व्यर्थ को हमें जानने के लिये तुम इधर उधर दौड़ा किये–जब मैंने देखा कि तुम मेरे बैरी मिस्टर मोनोटनी का आश्रय लेने को उद्यत हुये हो तो मैं तुम्हारे रक्षा के लिये दौड़ी क्योंकि जो एक बार उन से भयभीत हो जाते हैं सो बिना मेरी शरण पाये अपने आपे में नहीं आ सकते–अस्तु अब जो तुमने मेरे जानने की उत्कण्ठा प्रगट की है तो सुनो; देखो तुम्हारे कवियों ने अपने कुल ललनाओं को रमणी कह कर उन का चित्र यों खींचा है कि "लिखन

बैठि जाकी सविहि गहिगहि गरब गरूर-भये न केते जगत के चतुर चितरे कूर"–अब तो प्रायः तुम समझही गये होगे; परन्तु यदि अब भी मिस्टर मोनोटनी का भय हृदय में बर्तमान् होने के कारण न समझे हो तो लो अब मेरी बंशावली सुनो; मेरा जन्म संस्कृत के "रम्" धातु से है जिसका अर्थ क्रीड़ा करना है जब मैं बालिका थी तो प्यार से लोग मुझे नबीनता कहा करते थे अर्थात् नबीनता में और मुझ में कोई अन्तर नहीं है–देखो कविकुल मुकुट माघ ने भी मेरा चित्र योंही खींचा है कि "क्षणे क्षणे यन्नवतां विधत्ते तदेव रूपं रमणीयतायाः" अस्तु अब मैं अपना परिचय देकर बिदा होती हूं परन्तु मेरी छटा बर्षा ऋतु में प्रत्यक्ष दृष्टि गोचर होगी; अर्थात् बर्षा के पूर्व जहां रजोमय मैदान के व्यतिरिक्त और कुछ न था वहां मेरे बिहारार्थ मेघ लोग जल सिञ्चन करेंगे; पुनः प्रत्येक स्थानों में मेरी सन्ततिवत्सला प्रकृति माता हराहरा मखमली डासन बिछावैंगी; तदुपरान्त सारी पृथ्वी पुष्पावकीर्ण हो जावैगी; उधर भगवान् भास्कर के प्रखर किरणों से कहीं मेरा कोमल मुख न कुम्हला जावै इस विचार से महाराज इन्द्र मेघों का चन्दवां गगन मंडल में तनवा देंगे; पुनः इस प्रकार सूर्य्य देव अपना अनादर देख सब को दंड देने के लिये अपने पश्चिमोन्मुखीरथ की खिड़कियों को एक बारगी बन्द करलेंगे; परन्तु मेरी प्यारी सखी दामिनी रङ्ग में भङ्ग होते देख झट से अपना घूंघट मुख पर से हटावैगी; पर दुष्ट कामी चोर और पहरुओं को घूमते देखकर पुनः उसको छिप जाना पड़ैगा; ऐसी अवस्था में निद्रादेवी का पवन दूत आकर मेघों को हट जाने की आज्ञा देगा और चन्द्र देव भी प्रकृति की शोभा देखने को मैदान खाली पाकर आकाश पर अपना बिमान चढ़ावैंगे; हाय ऐसी अवस्था में ईर्षात्मक जलजात अपने सहोदर की बढ़ती देख सिर नीचा करलेगा; परन्तु सज्जन कुमुद गण चन्द्रदेव के

आगमन के बधाई में प्रफुल्लित हो "अपनी सुगन्धि सम्पत्ति" लुटा देंगे और स्वार्थी चकोरों के भी चञ्चल नेत्र स्थिर होंगे; फिर तो मन्द समीर भी सुगन्धि के लूट का भार लेकर कीर्तिवाही सज्जनों के समान निद्रादेवी की दोहाई संसार में फेरैगा और सारे चराचर जीव सुख में मग्न हो दुनिया के जंजालों को भूल जांयगे—मैं भी सूर्य्य देव के पूजन की सामग्री प्रस्तुत करने तथा अपने वस्त्राभरण के बदलने में लग जाऊंगी–बस इस प्रकार अपना सचित्र परिचय देकर रमणीयता देवी देखो वह जा रही है; मित्र अब मैं भी अपना कार्य्य समाप्त कर चुका; अतः आप से बिदा होता हूं नहीं कदाचित् मिस्टर मोनोटनी से पुनः साक्षात्कार कहीं न हो जाय इतिशम्– पं० श्रीकान्त पाठक

एक नार पश्चिम से आई ।
बारह पुत्र संग में लाई ॥
पुत्रन के संग पुत्री पांच ।
पुनः पांच के नाती साठ ॥
जब बोलन की इच्छा करै ।
दीर्घ बाहु मस्तक पर धरै ॥
सब सज्जन को तुरत बतावै ।
कहा वीत गई अब कह आवै ॥

पाठक! इस अष्टपदी को पढ़ कर जी में आया कि घड़ी भर सोचना चाहिये कि यह कौन और कैसी स्त्री हैजो पश्चिम से आई और साथ में इतना कुटुम्ब भी लेती आई–अब क्या था तुरन्तही बुद्धि को चाबी देने लगा; जब सब पुरज़े तेज़ी से चलने लगे तो अते पते की

सूझने लगी ; पर कोई बात एक सेकन्ड भी न ठहरती थी-हार कर आईग्लास (Eyeglass) उतार डाला और मजबूरन अक़्ल का ढकना मून्द के बेवकूफ की तरह चुप हो बैठा—पर मन में तो पहले सूझनेही की ठहराई थी क्या करूं कैसे पता चले इस पश्चिम की स्त्री ने मेरे मन को ऐसा अपने बश कर लिया कि मुझे कुछ ख़फगान सा हो गया पर बाहरे मैं शाबाश! हज़ार शाबाश है मुझे—अजी यह क्या कैसी ही मुशकिल Geometry (रेखागणित) के Problem (प्रश्न) लाओ अभी साल्व (Solve) कर दूं इस वक़्त अक़्ल ज़ोर में है—यह तो एक ऐसी चीज़ निकली जिसको मैं हमेशा अपने पास रखता हूं—पाठक! आप लोग तो ज़रूरही समझ गये होंगे क्योंकि आप लोग मुझ से ज़्यादाही बुद्धिमान् हैं और "अक़्लमंदारा इशारा काफ़िअस्त" पर जो महाशय इस पर भी न समझे हों उनसे मेरी इतनीही प्रार्थना है कि ऊपर लिखे हुये प्रस्ताव को दोहराकर पढ़लें-जो आप ज़िद करके मेरेही मुंह से सुना चाहते हैं तो न वह कोई स्त्री है न कुछ और सिर्फ़ "घड़ी" है अब कहिये कैसी पहेली बूझी—

इन घड़ियों को काम में लाने वाले कितने मनुष्य हैं इसकी तो मर्दुम शुमारी भी कठिन होगी—परन्तु हमने तो प्रायः बहुत कम लोग ऐसे देखे होंगे जो घड़ी के इस प्लेग से बचे होंगे—मुशकिल से कोई ऐसा स्थान होगा जहां यह न होगी—साहब लोगों की तो कौन बात है उन के ख़ानसामाओं में से शायदही कोई ऐसा करम का फुटहा होगा जिसकी पाकेट में आप बास न करती होंगी—भले मानुसों ने तो इसी से घड़ी का लगाना बहुत कम कर दिया और जो ज़रूरत के मारे लगाते भी हैं तो किसी पोशीदा पाकेट में—हां प्रिय पाठक! मेरा एक प्रश्न आप से यह है कि क्या आप बता सक्ते हैं कि घड़ी पहिले किसने बना कर तइयार की और कब से ईजाद

हुई ? परन्तु यहां इतनी समाई कहां कि उत्तर के लिये मुहफैलाय बैठा रहता हम को तो "अपने मुह मियां मिट्ठू" बनना बहुत प्रिय लगता है, और क्यों न लगे, जब कि हमी सब जानते हैं—सुनिये धन्यवाद देना चाहिये उस घड़ी को जिस घड़ी बेरोना नाम] नगर के पादरी पासीफिकस(Archdecon of Verona) ने इस जीव लोक को अपने जन्म रूप रत्न से सुशोभित किया और रत्नों की संख्या को बढ़ाया—यह महाशय नवमी सदी में पैदा हुये और ३० बर्ष की अवस्था में कठिन परिश्रम और कष्ट सहकर एक घड़ी तइयार की अब तो इनकी प्रशंसा की सीमा का पता लगना दुष्कर हो गया—जहां तक प्राचीन पुस्तकों के देखने से मालूम होता है तहां तक यही सिद्ध होता है कि ईसवी नवीं सदी के पहिले घड़ी का कभी किसी को खयाल भी न था; धीरे २ इसमें भीन मेख निकलती और कज मिटती चलीगई; फिर १२वीं सदी में इस कारीगरी की यहां तक उन्नति हुई कि आपही से आप यह घंटा बजाने लगी; तेरहवीं सदी में मिस्त्र देश के सुलतान ने द्वितीय फ्रेड्रिक के पास तोहफ़े में भेजी तब तो देश देशान्तर में यह एक आश्चर्य पैदा करने वाली बस्तु हो गई; बहुत से मनुष्यों ने तो इसे जीवधारियों में शामिल कर लिया; यहां तक कि १६८९ ईसवी में, जब इङ्गलैंड में द्वितीय जेम्स राज्य करते थे, स्काट-लैंड वालों से एक बड़ा युद्ध हुआ जिसमें दैव बश अंग्रेज़ों की हार हुई—जब स्काट लोगों ने अङ्गरेज़ी लाशों की तलाशी ली तो एक सिपाही की जेब में एक घड़ी पाई गई जिसका "कुट कुट" का शब्द सुनकर स्काट लोगों ने उसे जीवता समझ कर खूब अच्छी तरह से कुचल कर उसे मार डाला तब सन्तुष्ट हुये—

भारत बर्ष के कुछ देहाती ऐसे मूर्ख हैं कि वे इसको दंडवत करके देवी या भवानी का अवतार मानते हैं—क्योंकि पीतल लोहा इत्यादि

जो कि धातु हैं कहां से ऐसी शक्ति पासकते हैं कि सब को वक़्त बताया करैं; अथवा सोते से गुलमचाकर नियत समय पर जगा दें— आजकल यह वस्तु बहुत बड़ा काम करती है और इतने तरह के फायदे इस से जीव मात्र को मिलते हैं जिनका लिखना अथवा गिन्ती रखना बहुत मुशकिल है-रेलगाड़ी के चलने फिरने में तो यह पूरी सहायक है, नहीं तो रेल रोज़ही लड़ा करती नित्य हज़ारों जीव इस दुनिया को छोड़ दिया करते और ईश्वर को स्वर्ग वा नर्क में कई डिपार्टमेंट और अनगिन्ती बारिकें बनवानी पड़तीं, नई रोशनी वालों के लिये बंगलों का भी बन्दोबस्त बेचारे ईश्वरही को करना पड़ता, अंग्रेज़ी कट (cut) के कपड़े सीने वाले दर्ज़िओं को तो झक मार के अमृत पिलाय जिलाना पड़ता, नहीं तो दिन में सैकड़ों दफे ईश्वर की कमबख़्ती होती और उसे हाम फूल बनना पड़ता, अपने वैकुण्ठ की सारी अकड़ भूल जाती इसलिये कि वह तो अंगरेज़ी जानतेही न होंगे-यदि ध्यान दिया जावे तो घड़ी से बढ़ कर शायदही कोई ऐसी उत्तम शिक्षा दे सकता है; यह हमेशा हम लोगों को इस बात से सावधान करती है कि "गया वक़्त फिर हांथ आता नही"—वृथा समय खोना न चाहिये क्योंकि जितना समय निकल जाता है उतनाही हम अन्त समय के निकट पहुंचते जाते हैं——

आयुः क्षण लव मात्रं न लभ्यते हेमकोटिभिः क्वापि।
तच्चेद्‌गच्छति सर्वं ततःपरं काधिका हानिः॥

ब्रज मोहन कूल शर्म्मा

ह्वैहै वही जो राम रचि राखा।

महाराणी के मेमोरियल फण्ड के निस्बत लोग जुदे २ तरह के गुल-

गुले पका रहे थे किसी की राय थी इस रुपये से Art School शिल्प-शाला खोली जाय; कोई कहते थे प्रत्येक बड़े २ शहरों में टौनहाल बनाये जांय; किसी ने इसी को पुष्ट किया कि कृषि शाला या कारीगरी सिखाने का स्कूल जारी किया जाय इत्यादि–यह किसी ने न सोचा कि होगा वही जो बड़े२ अफसरों को पसन्द आयेगा; किन्तु यदि वही होना था तो भीख मांगने की भांत चन्दा जमा करने की क्या ज़रूरत थी–सात या आठ लाख रुपया जो पश्चिमोत्तर और अवध से वसूल हुआ है उस्से विलाइत के नामी कारीगरों से महाराणी की मूर्ति Busts बनवाई जांयगी और एक २ मूर्ति हरिद्वार मथुरा अयोध्या ऐसे प्रधान२ तीर्थ स्थानों में और लखनऊ आगरा बनारस ऐसे २ बड़े शहरों में रक्खी जांयगी–सुनते हैं एक एक "बस्ट" में कम से कम ४० या ४५ हज़ार रुपये के लगभग खरच होंगे और इस तरह पर चन्दे का बहुत ज़्यादा हिस्सा विलाइत के अर्पण होगा–इसी से हम ने कहा "हूहै वही जो राम रचि राखा" नहीं तो हम लोग कौन बड़े सुचित और सुख चैन में थे—अभी सांझ का बिहान भी नहीं भया एक वर्ष पहले लगभग कुल हिन्दुस्तान में कैसा भारी काल पड़ा था कि अभी तक हम लोगों ने इस्से छुटकारा नहीं पाया–हम लोग बेमुह और बे हांथ पांव के हैं अपना सर्वस्व अर्पण किये बैठे हैं; उचित था महाराणी के आत्मा के कल्याण निमित्त हिन्दुस्तान के हर एक प्रान्त में थोड़ी २ पृथ्वी गवर्नमेंट माफ कर देती उसकी मालगुज़ारी सर्कार न लेती और मुनाफा उसका दुर्भिक्ष पीड़ितों के सहायार्थ जमा रहता; या ग्रामों में बहुधा आधे लोग ऐसे हैं जो केवल एक जून साग पात खाके रह जाते हैं कितने पेट की अग्नि से झुलस दुबले अस्थिशेष हो रहे हैं; उनकी सहायता उस मालगुज़ारी से की जाती और अङ्गरेज़ी शासन की उदारता का सर्व साधारण में एक

उदाहरण हो जाता–किन्तु अपनी बर्तमान दशा में ऐसी आशा करना ही भूल है तो यह होना तो सर्वथा उचित था कि इस फण्ड का रुपया जो हमसे वसूल किया गया था हमारेही किसी फाइदे की बात में लगाया जाता; बह चाहो शिल्प शाला होती या चाहो इसी के समान और कोई बात होती; जिस्में यहां का रुपया यहीं रह जाता–पर हम लोगों के इस तरह के अरण्य रोदन को कौन सुनता है खास-कर नीति निपुण लार्ड कुरज़न महोदय के शासन में जो लम्बी २ स्पीचों के द्वारा दुधमुहे बच्चे को भी बरसों तक फुसला के रखने वाले मालूम होते हैं–

हिन्दी कालिदास की समालोचना ।

पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी ने लाला सीता राम के हिंन्दी कालिदास की एक २ पंक्ति चिथ्थार डाली है सही पर आत्म श्लाघा की साक्षात् मूर्ति उक्त लाला साहब एक भी मानने वाले नहीं हैं–ज़िद्द इसे कहते हैं–कबिकुल गुरू कालिदास पर जो कुछ उन्होंने घाव चढ़ाया सो तो थाही अब भारबि को भी वही घाव दे रहे हैं जो सरस्वती में बहुधा प्रकाशित होता है–हम समझते हैं इसके उपरान्त माघ और नैषध को भी इसी भाँत पंकिल करैंगे–हम नहीं जानते लाला साहब की नीरस रुखी कविता में पढ़ने वाले को क्या स्वाद मिलता है–

पं० मुकुन्द राम का आयुर्बेदीय औषधालय ।

काशीपुर तराई निवासी पं० मुकुन्द राम जोशी के औषधालय में परीक्षा की हुई सब भांत की औषधियां तैयार रहती हैं जिसका बिबरण उन्हें लिख केटलाग मंगाने से मालूम हो सकता है—हमारे पाठकों में जिस किसी को उन की दवाइयों की परख करनी हो केट-लाग मंगा कर उन २ दवाइयों का गुण इत्यादि जान सकते हैं–

हिन्द वन्दना।

पं० श्रीधर पाठक लिखित

जय देश हिन्द देशेश हिन्द । जय सुखमा सुख निःशेष हिन्द ॥
जय धन बैभव गुण खान हिन्द । बिद्या बल बुद्धि निधान हिन्द ॥
रस खान हिन्द जन खान हिन्द । गुण गण मण्डित बिद्वान् हिन्द ॥
जय चन्द्र चन्द्रिकाअमल हिन्द । जय बिश्व बाटिका कमल हिन्द ॥
जय सत्य हिन्द जय धर्म हिन्द । जय शुभाचरण शुभ कर्म हिन्द ॥
जय प्रथा हिन्द जय नेम हिन्द । जय निश्चल ईश्वर प्रेम हिन्द ॥
जय भाव हिन्द जय भक्ति हिन्द । जय जयति बिलक्षण शक्ति हिन्द ॥
जय शास्त्र हिन्द जय बेद हिन्द । जय जय लव वर्ण बिभेद हिन्द ॥
जय यज्ञ हिन्द जय होम हिन्द । जय भूमि हिन्द जय ब्योम हिन्द ॥
जय देव हिन्द जय मनुज हिन्द । जय जय बिध्वंसित दनुज हिन्द ॥
जय कला कलापति प्रमुद हिन्द । जय बिकसित मुनिजन कुमुद हिन्द॥
जय मलय मधुर मारुती हिन्द । जय कुबलय कल भारती हिन्द ॥
जय शूर हिन्द जय बीर हिन्द । जय शत्रु दमन रण धीर हिन्द ॥
जय जीव हिन्द जय प्राण हिन्द । जय भुक्ति मुक्ति निर्वाण हिन्द ॥
जय बिद्या बिधु नव उदय हिन्द । जय जयति दयामय हृदय हिंद॥
जय बिश्व बिदित उद्यान हिन्द । जय जयति स्वर्ग सोपान हिन्द ॥
जय नगर ग्राम अभिराम हिन्द । ज़य जयति जयति सुखधाम हिन्द ॥
जय असुर समर समवेत हिन्द । जय जय प्रसिद्ध रण खेत हिन्द ॥
जय जय सर्वस्व उपेत हिन्द । जय जय बाणिज्य निकेत हिन्द ॥
नागेन्द्र हिन्द राजेन्द्र हिन्द । जय जय बहु बार जितेन्द्र हिन्द ॥

जय तीर्थ हिन्द जय पुरी हिन्द । जय प्रकृति ललित माधुरी हिन्द ॥
जय शोभा छबि नित नवल हिन्द । जय धूलि धूसरित धवल हिन्द ॥
जय सरसिज मधुकर निकर हिन्द । जय जयति हिमालय शिखर हिंद ॥
जय जयति बिन्ध्य कन्दरा हिंद । जय मलय मेरु मन्दरा हिन्द ॥
जय चित्र कूट कैलास हिन्द । जय किन्नर यक्ष निवास हिन्द ॥
जय शैल सुता सुरसरी हिन्द । जय यमुना गोमति गोदावरी हिन्द ॥
जय पावन परम पुनीत हिन्द । जय जय जग लोकातीत हिन्द ॥
जय चतुरानन चातुरी हिन्द । जय चमत्कार प्राचुरी हिन्द ॥
जय आगम पटु पाटवी हिन्द । जय दुर्गम बिटपाटवी हिन्द ॥
जय उत्पाटित जग पटल हिन्द । जय धर्मधुरन्धर अटल हिन्द ॥
जय पन्थ हिन्द बैराग हिन्द । जय तीरथ राज प्रयाग हिन्द ॥
जय अवध हिन्द हरिद्वार हिन्द । जय जय ब्रज कृष्ण बिहार हिन्द ॥
जय वृन्दाबन मधु पुरी हिन्द । जय गत कर्बुर शर्वरी हिन्द ॥
जय अङ्ग हिन्द जय बङ्ग हिन्द । जय जय तैलंग कलिङ्ग हिन्द ॥
जय राग हिन्द जय रङ्ग हिंद । जय जय तुरङ्ग चतुरङ्ग हिंद ॥
जय कुबचन मुख संपुटित हिंद । जय सूनृत प्रिय प्रस्फुटित हिंद ॥
जय दलित यवन दलदुष्ट हिंद । जय भुज बल पुष्कल पुष्ट हिंद ॥
जय विमल बिमल बन माल हिंद । जय बिद्रुम हीर प्रबाल हिंद ॥
जय उज्वल कीर्ति विशाल हिंद । जय करुणा सिंधु कृपाल हिंद ॥
जय जयति कोट भूपाल हिंद । जय जयति वृद्ध अरु बाल हिंद ॥
जय जयति शास्त्र आचार्य हिंद । जय जयति सनातन आर्य हिंद ॥
जय जयति सदा स्वाधीन हिंद । जय जयति जयति प्राचीन हिंद ॥

दोहा

हिन्द अनूपम अगम बन । प्रेम बेलि रस पुंज ।
श्रीधर मन मधुकर फिरत । गुंजत नित नव कुंज ॥

हिन्दीप्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन बायुसों मणिदीप सम थिर नहि टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २४ सं० ५।६।७ } प्रयाग { मई जून जुलाई सन् १६०१ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहाय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा सर्वसाधारण से अग्रिम १॥३)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) ——०*०—— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज १=)

——:००:——

नमूने की कापी =)॥

१-११-०१



हिन्दीप्रदीप

जि० २४ सं०५ । ६।७ } प्रयाग { मई जून जूलाई सन् १६०१ ई०

मनुष्य तथा बनस्पतियों में समानता।

मनुष्य तथा बनस्पतियों के शरीर की बनावट में प्रकृति ने ऐसी प्रकृष्ट चतुराई प्रगट की है जिस पर ध्यान देने से चित्त चक्रित होता है और इन दोनों में इतना मेल देखने वाले हमारे पुराने आर्य प्रकृति के कैसे बड़े उपासक थे कितना प्राकृतिक बातों को अभ्यसित Study किये हुये थे यह बहुधा उन की लिखावट से प्रगट है–मनु ने लिखा है–

"शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः ।
वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम्" ॥

पाप तीन प्रकार के कहे गये हैं कायिक मानसिक वाचिक; मनुष्य जो शरीर के द्वारा पाप करता है उस को नरक की विकराल महा दारुण यातना भोगने के उपरान्त उस पाप से छुटकारा पाने को

कुछ दिन के लिये वृक्ष का शरीर धारण करना पड़ता है-वाचिक पाप किये हुये को भार्किक यातना भोगने के उपरन्त पक्षी या चौपायों का शरीर लेनापड़ता है और मानसिक पाप किये हुये को अन्त्यज अर्थात् डोम चमार आदि के शरीर में जन्म लेना पड़ता है-तात्पर्य यह कि मनु के इस लेख से यही पता लगता है कि मनुष्य का शरीर पेड़ अथवा बनस्पतियों के गढ़न से बहुत जोड़ खाता है-तब तो कायिक पापों का परिणाम पेड़ को कहा; मानसिक का परिणाम वृक्ष को न कहा चिड़िये और चौपाये कहे गये-वृक्ष के बिये जैसा सड़ घुन जाने पर या भूंजे जाने पर फिर नहीं जमते वैसाही आदमी में भी देखा जाता है कि विषयीजन जो क्षीणबीर्य हैं या गरमी आदि रोगों से भुने हुये होते हैं उन के बीर्य की उत्पादिका शक्ति नष्ट हो जाती है-हम लोग जो काम हांथ के द्वारा करते हैं वृक्षों में वही होथ का काम डालियों के द्वारा होता है-हम अपना भोजन मुख के द्वारा कर शरीर में पोषक द्रव्य पहुंचाते हैं वृक्षों का वही काम जड़ या मूल के द्वारा होता है-इसी से ये पादप हैं क्योंकि पाद अर्थात् नीचे से अपना पोषक द्रव्य जल को खींचते हैं-और ऊपरी भाग से डालियां और पत्तियां तथा फूलों से जो उन के शरीर में मल के स्थान में है उसे फेंकते हैं; यह काम वे रात में विशेष किया करते हैं-बहुत से फूल और पत्तियां हैं जिन की सुगन्धि या दुर्गन्धि दिन में इतना स्पष्ट नही मालूम होती जितना रात में-गुलशब्बू के किस्म के फूलों की सुगन्धि रात को अधिक हो जाती है; बुद्धिमानों ने इसी से इसका नाम रजनी गन्धा रख दिया है-डाक्टर लोग रात में बगीचों में वृक्ष के नीचे रहना या सोना मना करते हैं-इसलिये कि वृक्ष अपने शरीर के विषैले पदार्थों को फेंका करते हैं; घाम, छांह, शीत, उष्ण, जाड़ा, गरमी आदि का सुख दुःख जैसा हम अनुभव करते हैं वैसाही ये वृक्ष भी-आदमियों में जैसा शीतल देश के निवासी उष्ण देश में नहीं जी सकते वैसाही इन वृक्षों में देखा जाता है-हम लोगों के देह में जैसा रस लहू मास मेदा हड्डी आदि सात धातु हैं वैसाही इन वृक्षों के भी रस Juce गूदा आदि हैं-जैसा हम लोगों को बालवृद्ध तरुनाई का विकाश या जुदे २ कारणों

से उनमें घाट या बाढ़ होता है वैसाही इन वृक्षों में भी—तात्पर्य यह कि हमारी और इन बनस्पतियों की एक२ बात पूरी तरह पर मिलती है—बहुधा वृक्षों में भी ऐसे हैं कि जिनमें काट छाँट न की जाय तो बनैले हो जाते हैं वैसाही जैसा मनुष्य समाज में न रहे और सभ्यता की बातें उसे न सिखाई जांय तो गवांर या बनैला हो जाता है—सीधा या ठेढ़ा आदि में जिस उठान से वृक्ष उठता है बड़ा होने पर वह वैसाही बना रहता है बल्कि उस प्रकार की उठान उसकी और दृढ़ हो जाती है—आदमियों में भी हम ऐसेही देखते हैं कदाचित् इसी बुनियाद पर यह कहावत चल पड़ी है "होनहार बीरवान के होत चीकने पात" बालक लड़काईं में जैसा रहता है बड़े होने पर उस की वह भली या बुरी तबियत भलाई या बुराई में अधिक प्रबल पड़जाती है—जो बालक लड़काई में क्रोधी कृपण या नीची तबियत का है बड़े होने पर कितनी उत्तम शिक्षा के होने पर भी क्रोध कृपणता या नीच स्वभाव में वह बढ़ता जाता है और आमरणान्त वैसाही बना रहता है—जो बालक लड़काई में सीधा, सरल स्वभाव, उदार चित्त, शान्त, शहनशील, है वह बड़ा होने पर चाहो बिलकुल पढ़ाया लिखाया न जाय तौभी सिधाई औदार्य और तितिक्षा आदि गुणों में बढ़ताही जायगा—अधिकतर तो ये गुण ऐगुण मा बाप के रजवीर्य के अनुसार होते हैं; वैसाही जैसा जो कडुये दाने के वृक्ष हैं उन का फल मीठा नहीं हो सकता न मीठे दाने के पेड़ों के कडुये फल फल सकते हैं—लड़के का शील स्वभाव चाल चलन और बर्ताव देख हम उस के मा बाप के शील स्वभाव चाल चलन बर्ताव आदि को जान सकते हैं—ऐसेही बाप ने जो भलाई या बुराई की है वह उस की सन्तान पर उतरती है इसी से यह कहावत है "बाढ़ो पुत्र पिता के धर्मे" मनु ने भी ऐसाही कहा है—

"यदि नात्मनि पुत्रेषु नच पुत्रेषु नप्तृषु।
नत्वेवं चरितो धर्मः कर्तुर्भवति नान्यथा"॥

मनुष्य जो भलाई या बुराई करता है उस को उस बुराई या

भलाई का फल यहीं इसी जन्म में मिल जाता है कदाचित् न मिला तो लड़कों में उस का फल देखा जाता है—लड़कों में किसी कारण न भी भया तो पोते या नातियों में तो अवश्य बुराई या भलाई का परिणाम होताही है कभी व्यर्थ जाताही नहीं—बुद्धिमानों ने इसी से यह सिद्धान्त कर रक्खा है कि बहू जो अपने घर में आवै वह बहुतही ऊंचे घराने और सच्चरित्र मा बाप की हो; क्योंकि आगे को औलाद का सुधार या बिगाड़ इसी पर निर्भर है—यहां पर वृक्ष के सम्बन्ध में एक बात रही जाती है वह यह कि पेड़ों में पैबन्द या कलम लगाई जाती हैं आदमियों में वह पैबन्द विलाइती मेम साथ लिये इंगलैंड के लौटे हुये नव शिक्षित युवक जन हैं—खयाल रहे कि इस तरह के कलमी पेड़ों के फल बहुत मधुर और मनोहर होते हैं पर उनकी गुठली में उत्पादिका शक्ति न होने से बीज उन का बोने से उगता नहीं—यह भी उस महामहिम सर्वशक्तिमान् की महिमा वारिधि की एक तरंग है नहीं तो हमारी समग्र आर्य जाति इस "मा पिलंगिनी बाप पिलंग तिनके लड़के रंग बिरंग" वाली दोगली नसल से दूषित हो कुछ दिनों में निर्मूल हो जाती—

दूसरों का दोष हम सहज में ढूढ़ लेते हैं अपना नहीं।

भारत की वर्तमान दीन दशा के बारे में भिन्न २ लोगों के भिन्न २ विचार हैं ऐसाही भारत के पुनः उत्थान की उपाय भी प्रत्येक मनुष्य अपनी धुनि पर सोचते हैं—कोई कहते हैं वर्ण विभाग सर्वनाश का मूल है और चाहते हैं कि जाति पाति के फन्दे को फौरन तोड़ समस्त हिन्दुस्तान में जगन्नाथ पुरी की हांडी चढ़ जाय—कोई छिद्र दर्शी पुराणों के अलंकारिक वर्णन की दो चार इधर उधर की विरुद्ध बातों को आगे रख उसी को अपनी अवनति का कारण कहते हैं—कोई महाशय कहते हैं यह सब ब्राह्मणोंही का बिगाड़ा है; हमारे पेशवा हो निरा अपनाही स्वार्थ इन्होंने देखा जिससे हिन्दू की कौम छिन्न भिन्न हो कमज़ोर पड़ गई; इन लोगों ने प्रजामात्र को मूर्ख कर सत्य को उन से छिपाया इत्यादि—

मेरी छोटी बुद्धि में आता है कि जब कोई बनी बात बिगड़ने लगती है तब उस बिगाड़ का एकही कारण नहीं होता एकही कारण हो भी तो उसकी मरम्मत बहुत जल्द और सहज में हो सकती है किन्तु जब सब ओर से बिगड़ना आरंभ होता है तब फिर कुछ करते धरते नहीं बन पड़ता—मेरी समझ में तो यही आता है कि पहिले के महात्मा ब्राह्मणों ने जो कुछ किया अथवा जो कुछ सोचा वह शुद्ध भाव से सर्व साधारण के हित के लिये; उनमें अणुमात्र भी स्वार्थ का लेश न था—पर हां "घोड़े की बला बन्दर के सिर" वाली कहावत के अनुसार उन्हें यह क्या भान था कि हमारे कलियुगी सन्तान भेड़ों के समान ऐसे अजान होंगे कि ज्ञान और सद्विचार का उनमें नामो निशान भी न रहेगा पर आन शान में टीपूसुलतान के भी कान काटने को प्रस्तुत रहैंगे—अपने दोषों को तो देखैंगे नहीं किन्तु डरपोक हाथी के समान अपनेही दल को घायल करना उन्हें सूझैगा—हमारे में भी कुछ दोष या त्रुटि है इसका खयाल भी मन में नहीं आवता वरन उन्हीं चिरस्मरणीय महात्माओं को दोष देने को सन्नद्ध रहते हैं—उनमें कहां तक परार्थनिष्ठा थी और निज स्वार्थ की ओर से आख मूंदे थे यह उनकी एक २ बात से प्रगट है—अपने लिये उन्होंने सन्तोष को बड़ा धन माना पर औरों को यही सिखाते रहे कि देखो तुम इस लोक की उन्नति में सन्तोष कभी न करो इसी बुनियाद पर यह श्लोक है— "असन्तुष्टाद्विजानष्टा सन्तुष्टाः क्षत्रियर्षभाः"—अब देखते हैं सन्तोष जो उन्होंने अपने लिये चुना था उस पर देश का देश टूट पड़ा एक की जगह उन्हें आधा और चौथाई भी मिलता जाय तो गैर के मुकाबिले उन्हें सन्तोष है—आधा पेट खाकर भी जीवन पार होता जाय तो समूचे के लिये कभी उन्हें चेष्टा न होगी—अपने आगे की परसी थाली दूसरा सब की सब उठाये लिये जाता है कुछ परवाह नहीं; हां अलबत्ता अपना कोई उस थाली में हाथ छोड़ने का मन करे तो ज़रूर उस के जान के गांहक होंगे; उस समय सन्तोष और धैर्य को पास फटकने का मौका नहीं देंगे—सच है—

"परनिन्दासु पाण्डित्यं स्वेषु कार्येष्वनुद्यमः ।
प्रद्वेषश्चगुणज्ञेषु पन्थानो ह्यापदांत्रयः" ॥

अर्थात् पराई निन्दा में चरपर, अपने निज के काम में आलस्य, गुणियों से द्वेष, ये तीनों रास्ता विपत्ति की ओर मनुष्य को ले जाने वाली हैं-हमारे लोगों में बहुधा इन तीनों की कमी नहीं पाई जाती कहावत है "बोवै पेड़ बबूल का आम कहां से होय" ब्राह्मणों के पूर्वज जो सदा सब के हितैषी रहे उन्हीं की निन्दा का पुण्यपाठ इस समय बहुधा सभ्य समाज का एक साधारण उद्देश्य हो गया है-जैसा "ये ब्राह्मण स्वार्थी हैं अपने लिये इन्होंने बहुत से आराम और आशा इसें रख लिये हैं, अपने को सबों से श्रेष्ठ मनवाया, औरों को अपने से नीच और कम इत्यादि"-जो महाशय इस तरह की ऊटपटांग बातें झाड़ा करते हैं उन से मेरा यही प्रश्न है कि क्या इन ब्राह्मणों के दोष दर्शी या शत्रु ऐसा भी कोई समय था जब नहीं थे; किसी समय में राक्षस और असुर थे; फिर चार्वाक बौद्ध जैन तथा म्लेच्छ हुये; अब ये सभ्य समाज में नई रोशनी वाले हैं-हम यह कभी न कहेंगे कि ब्राह्मण सर्वथा निर्दोष हैं किन्तु इस बिगड़े ज़माने में भी औरों की अपेक्षा ये बहुत कम बिगड़े हैं और दोष से गुण इन में अब भी बहुत अधिक हैं-फिर कोई समय तो ऐसा भी था कि ये साक्षात् सतोगुण की मूर्ति थे इनमें सब गुणही गुण था दोष का कहीं लेश भी न था-क्या हिन्दुस्तान का पुराना इतिहास इस बात की साक्षी नहीं है कि ब्राह्मणों ने सारा राज्य, बाणिज्य, कृषिकर्म, तथा राज सेवा आदि लाभ प्रद काम सब आप लोगों को सौंपा और आप स्वयं बनान्तरों में पर्णशाला बनाय नीवार आदि कदन्न खाकर कठिन से कठिन यम नियम संयम तथा इन्द्रियों के दमन में प्रवृत्त रह अपना समय बिताते थे-न विश्वास हो "नीवार मुष्टिपचना गृहिणी गृहाणि" आदि भवभूति प्रभृति कवियों के बर्णन पढ़िये तो मालूम हो जायगा कि बनों में वे ऋषि कितना क्लेश सहते थे और आप लोगों को बिशाल हर्म्य और सुन्दर महलों में रहने और पुष्ट से पुष्ट मांसौदन तथा अनेक तरह के दूसरे २ भक्ष्य भोज्य

चोष्य पेय षट् रस भोजन की आज्ञा दे गये-हमारी सभ्य समाज के प्रत्येक गृहस्थ को इस का भरपूर अनुभव है कि स्कूलों में लड़कों की शिक्षा कितनी मंहगी हो रही है फीस आदि का खर्चा देते चूर ढीला होता जाता है-पहले के ऋषि सन्तान सब प्रकार की शिक्षा आप को दे गये हैं और एक पैसा वेतन के ढंग पर कुछ नहीं लेते थे; बल्कि भृतकाध्यापक की निन्दा लिख गये हैं-कुछ मासिक लेकर वेद पढ़ाना तो इतना बुरा समझा गया है कि ऐसा करने वाले के लिये धर्मशास्त्र में प्रायश्चित्त लिखा है-और भी क्या वे अपनी दूर दर्शिता से गूढ़ से गूढ़ राजकाज सम्बन्धी सलाह आप को नहीं देते थे? समय २ वृष्टि न होने पर यज्ञ के द्वारा आपकी कृषि की वृद्धि नहीं करते थे? इतनाही नहीं बरन काम पड़ने पर रणक्षेत्र में आपके साथ जाय शत्रु से लड़ते थे और विजयी होते थे-जिस समय भारत में सब भांत अमन चैन था सब लोग इतने भोग लिप्सू हो गये कि बौद्ध तथा म्लेच्छों से वेद तथा वैदिक धर्म की रक्षा कोई न कर सका विधर्मियों ने कितने बहुमूल्य ग्रन्थों को नष्ट कर दिया और लाखों मनुष्यों को हटात् वैदिक धर्म से च्युत कर अपना गोल बढ़ाते गये; राजा को भी प्रजा बना लिया—धन्य है उन ऋषि सन्तानों को उन विप्रवरों को कि उन्होंने ऐसी हीन दीन दशा में भी न जानिये कितने अन्धड़ों को सहते हुये भी संस्कृत के टिम टिमाते दीपक को फिर भी उसकारतेही रहे-मैं यह मानता हूं कि सर्वथा निर्दोष ये ब्राह्मण भी नहीं कहे जा सकते किन्तु इनका अपराध क्षन्तव्य है इसलिये कि उनका विद्यारूपी नेत्र के फोड़ने के एक मात्र कारण इतर वर्णकेही लोग हैं-जब विद्या न रही तो उनका भी बिगड़ जाना कौन सा अचरज हैं-जब प्रकाश न रहा तो अन्धकार में सीधी बात भी उलटी मालूम होती है; रसरी देखकर सांप का भ्रम होता है-जब विद्या का दिवाकर अस्त हो गया और अविद्या तिमिर चारो ओर छाजाता है तब बुद्धिमानों की बुद्धि भी भ्रम में पड़ धोखा खा जाती है-ब्राह्मणों का दोष तो पीछे देखा जायगा यह सब आपही की असावधानी का फल है जिस्से लाख का घर खाक में मिला जाता है-सैकड़ों किस्म की फुजूल खरची, व्यर्थ की

मुकद्दमाबाज़ी, यह हमारे पुरखों की रियासत बाग या पेड़ है हमारा दूसरा भाई इसे क्यों लेले; सैकड़ों हजारों का स्टैंप लगाय गवर्नमेंट के अर्पण कर दिया—अन्त तक इतना खर्चा अदालत का पास से निकल गया कि कुल रियासत का चौथाई मानो खो बैठे—महात्मा पूर्वजों के लगाये वेदादि सत्शास्त्र महा वृक्ष को कोरान या बाइबिल की गोठिल कुल्हाड़ियों से कटते देख हत भाग्य ब्राह्मण तथा संस्कृत के प्रोत्साहन निमित्त कभी दस रुपया भी खर्च करना आप को जब्र तथा असह्य होता है तो अब बताइये ये ब्राह्मण बेचारे किस भरोसे पर क्या खा कर विद्या को पढ़ते पढ़ाते—

अस्तु इस सब बखेड़े से हमें कुछ प्रयोजन नहीं हम को तो इस टेंटें से यही सिद्ध करना है कि अपना दोष किसी दूसरे पर लगाने से कोई लाभ नहीं है—हम लोगों की विद्यमान हीन दशा का केवल ब्राह्मण कारण हुये हों सो नहीं बरन सब के सब एक साथही धर्म कर्म से च्युत हो गये—यह कहना कि ब्राह्मण अपने आप सब के सिर मौर बन गये ठीक नहीं मालूम होता क्योंकि हम हज़ार चाहें कि हम सबो में श्रेष्ठ बन बैठें पर हमारे चाहने से कुछ न होगा जब लों हम अपने को ऐसा न बना लें कि सब लोग हमें लाचार हो मानें—इस्से सिद्ध होता है कि इनमें गुण इतने थे कि दोष इनके गुणों में लीन हो गये— "एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवांकः"—प्रसंग प्राप्त यहां हम को एक बात पर और विचार करना है, बहुत लोग मानते हैं कि मत मतान्तर के झगड़े हमारे में एका की जड़ उखाड़ने तथा हमारी पोलिटिकेल कमज़ोरी का कारण हुआ है हम भी इस बात में थोड़ा सहमत हैं किन्तु विचार कर देखिये तो विलाइत में मत मतान्तर के झगड़े हमारे यहां से कम नहीं है बल्कि हम तो यही कहेंगे कि मत मतान्तर के झगड़े और हमारी मुल्की तरक्क़ी से कोई सरोकारही नहीं है; क्योंकि यदि हम सिटी रोड से कचहरी जाया चाहें और आप क्राइब रोड से जाना चाहें तो हम से आप से लाठीचल सकती है; कभी नहीं; इसलिये हमारा और आपका विरोध देख प्रायः लोग हम दोनों को सिड़ी समझैंगे—सच तो यों है कि मातृ भाषा की उन्नति और

पारलौकिक बातों को छोड़ ऐहिक विषय में सबों का एक मत इंगलैंड को आज दिन संसार में सबों का सिरताज कर रहा है-वही मातृ भाषा की अवनति और भिन्न२ मतों के कारण संसारिक बातों में हमारा आपस में अनैक्य का होना भारत को कोढ़ में खाज के समान हो रहा है-अन्त में हम अपने पढ़ने वालों से निवेदन करते हैं कि केवल दूसरों ही का दोष देखना हमारे लिये कभी उपकारी नहीं हो सक्ता; प्रत्येक मनुष्य का दोष देखते२ आप स्वयं दोष की खान बन बैठेंगे; किन्तु नीति निष्ट न्याय परायण जनों की यही चाल है कि वे अपने तथा दूसरे के दोषों को बराबर के पलरे पर तौलते हैं और तब किसी सिद्धान्त पर दृढ़ होते हैं-एक प्रार्थना आप से और है कि आपको निरा दोषही देखने की बान पड़ी है तो मेरे इस लेख में केवल दोषोंही पर न रह यदि इसमें कोई गुण हो तो उसपर भी ध्यान दीजियेगा—

श्रीकान्त पाठक

चलता जादू।

जितनेमुह उतनी बात हुआ करती हैं जादू के बारे में लोगों के तरह २ के नये २ खयालात हैं; कोई इसको बेहूदगी का ज़खीरा मानते हैं; कोई खयाल की बन्दिश; कोई हांथ की सफाई इत्यादि जो जिस के मन में आता है वैसाही नाम धर अपने मन का समझौता समझ लिया करते हैं-मैं किस की ओर वोट (Vote) दूं इस गलतापेची में बड़ी देर तक परेशान रहा अन्त को मुझे याद आई कि पण्डित वही जो अपनी निज समझ के अनुसार बात कहे-सच तो यों है कि ऐसी बातों का ज्ञान आदमी को तभी होता है जब उसमें कुछ तजरिबा आने लगता है-मैं भी पहिले जादू को वृथा का पाखण्ड समझता था पर एक बार मुझे परदेस जाना पड़ा और जिस गांव में जाकर ठहरा वहां के सब लोग टोना टनमन्न या जादू के बड़े कायल थे; मुझे इस विषय में नास्तिक समझ सब लोग अपने गुरू बजरबंटू ओझा के पास ले गये और मेरे अविश्वास का सब हाल उनसे कहा—पहले तो बजर-

बंटू की शकलही देख मेरी अक्ल काफूर हो गई, पसीने आ गये, हांथ पांव कांपने लगे, पर "हिम्मते मरदा मददे खुदा" यह फिकरा जो याद आया तो अपने डरपोकपन पर बड़ी ग्लानि हुई और मन में कहने लगा मैं बंगाली होता तो अच्छा था दूरही से धोती सह्माल कर "सटाक जूती मारबो" इतना कहने की तो कुछ हिम्मत रहती—ओझा जी बोले—क्यों जादू देखेगा कैसा होता है? मैं ने बिना कुछ सोचे विचारे कह दिया—हां—इतना सुनतेही बजरबंटू ने दो या तीन खोपड़ियां अपने जादू घर से मंगाईं उनमें कुछ मसाला सा छोड़ा तो बड़ी आग सी जलने लगी और ऐसा धुआं हुआ कि दम घुटने लगा मैं न जान सका कि वह ओझा मुझ से कितनी दूर पर था—आखें मैंने बन्द कर लीं अब तो ऐसे २ शब्द सुनाई देने लगे मानो कहीं बड़ी भीड़ या मेला सा लगा हो; मैंने समझा कदाचित् भूतों की कचहरी लगी होगी, हाय, अब क्या होगा नाहक की हत्या में आ पड़ा—इतने में तोप छुटने का सा शब्द हुआ मैंने जो चौंक कर आंख खोली तो देखता हूं कि एक मैदान में आकाश से लाखों तारे टूट आपस में लड़ रहे हैं; दामिन अलग दमक रही है; एक ओर से झुण्ड के झुण्ड औरत और मर्द चले आ रहे हैं; मैदान बड़ा भारी था एक ओर से पुरुष दूसरी ओर से स्त्रियां आ आकर जमा हो गये—तब बजरबंटू ने बारूद का एक गोला धड़ाम से पृथ्वी पर मारा जिस के पृथ्वी पर पड़तेही बड़ा भयंकर शब्द हुआ और एक परी सी उस के उंजाले से निकल कर उड़ी—इसकी सुन्दरता को मैं ने एक झलक मात्र देखी थी किन्तु सौन्दर्य में लक्ष्मी या सरस्वती से कम न थी—अब तो बजरबंटू मेरे पास खड़ा हो ऊपर को हाथ उठा न जाने क्या बकने लगा; तब वह परी जो उड़ी थी हांथ में एक बड़ा भारी आइना (दर्पण) लिये नीचे की ओर उतरी और न मालूम किस भाषा में बजरबंटू ओझा से उस ने कुछ कहा—पाठक यह एक साधारण दर्पण न था जिसके तेज और चमत्कार का क्या कहना जिधर को मोड़ दिया जाता था उधरही के लोगों की आंख इसकी चमक से बन्द हो जाती थी; आंख हांथ से बन्द कर लेने पर भी उस की रोशनी अपनी चका चौंधी वापस नहीं लेती थी—

आप लोगों का सन्देह दूर करने को कि यह परी कौन थी हम इसका न्याय देवी नाम रक्खे देते हैं और इसके यथानमस्तथागुणः का परिचय अभी आप को हुआ जाता है-

सब के पहिले उस न्याय देवी ने अपने आगमन का कारण यों कह सुनाया-"मैं ने सुना है कि भारत में अनेक प्रकार के अन्याय, दुराचार, कपट, जाल, फरेब, मक्कारी आदि ने अपने मनहूस सब्ज़ कदम से देश भर को मलिन दूषित और अपवित्र कर रक्खा है-आज मैं इन सबों को निर्मूल करने को आई हूं सो मैं आप सबों को सूचना देती हूं कि मेरी आज्ञा के अनुसार बर्ताव करो-यह सुन सैकड़ों हज़ारों मनुष्य सहम से गये होश हवास उन के जाते रहे; परन्तु कितनों के चेहरे पर प्रसन्नता और दमक या नूर मानो मानिक सा चमकने लगा-अब तो डर, आशा, प्रसन्नता, और शोक इन चारों ने वहाँ के सब लोगों को आपस में बांट लिया-उपरान्त पहिली आकाशबाणी जो सुनाई दी वह यह थी कि "जो पदवी, जो धन, जो जायदाद, जिसकी जितनी और जैसी है वह उसी के पास तुरन्त पहुंचे"-जिस के सुनतेही लोग अपनी २ सार्टीफिकेट, दस्तावेज़, बयनामे, बेचानामे, वसीयतें, सनदें, Documents decrees, इत्यादि जिन पर लाख की मुहरें लगी हुई थी निकाल २ दिखलाने लगे परन्तु जब उस दर्पण का अक्स उन पर पड़ा तो जितने उन में से जाली कागज़ात या दस्तावेज़ थे उन की मुहरें जलने लगीं और उन लिफाफों के भीतर के कागज़ात उड़ उड़ कर अपने यथार्थ और वास्तविक मालिकों के हांथ में जाने लगे-देखतेही देखते सैकड़ों आदमी जो बड़ी शान शौकत से सब के आगे कूद रहे थे सब छिनवा बैठे और बहुत से गरीब भिखमंगे जो कम्बल ओढ़े दबके हुये पीछे खड़े थे दम भर में मालामाल लक्ष्मीपात्र हो गये-यह देख बजरबंटू ने दौड़ कर उन फरेबी दगाबाज़ों के कमखाब के चोगे, ज़रदोज़ी अचकने, शिमले, कलंगी, दुशाले, सिरपेच आदि सब छीन उन्हीं कम्मल वाले कंगालों को पहना दिया और उन फरेबियों को धक्का दे पीछे हटा दिया-इस निराले ढंग की अदला बदली का अद्भुत दृश्य देख मैं भौंचक्का सा हो गया; मेरे एक हिन्दू भाई ने एक मियां

भाई की बेतरह खबर ली उन से सब कुछ छीन एक फूटी सनहकी दै धता किया—

उपरान्त दूसरा शब्द जो आकाश से सुनाई दिया वह मर्द औरत दोनों के लिये था कि "सब लोग अपने सच्चे मा बाप के सिपुर्द किये जांय" यह शब्द होतेही वह दर्पण फिर एक बार सब की ओर घुमाया गया जिसके घूमतेही लोगों की आखों में चकाचोंधी आगई; आपस में लोग धक्का मुक्की करने लगे; किन्तु बहुत से लोग जो कुनवे वाले थे मानो सबको छिनवायबांड़े हो चुप के से खड़े रह गये—बहुत से लोग जो अपने को आबाल ब्रह्मचारी विदित किये थे जिन को स्त्रियों को देखने से भी घृणा थी और जो विवाह न कर क्वांरे रहना स्वीकार किये थे; इस समय छः या सात लड़की लड़कियों के पिता बन बैठे—अनेक सन्यासी और महात्मा जो अमीर घरानों में बड़े पूजनीय माननीय थे आज उन की गोद में उन्हीं रईसों के बच्चे उन्हें बाप कह पुकारने लगे—बहुतेरी स्त्रियां घर का घरही में हिसाब लगते जान और अपने बालकों को अपने रिश्तेदारों की गोद में देख बड़ी सन्तुष्ट हुईं—इस लेन देन के पीछे बड़ा सन्नाटा छागया पर अपने बालकों को अपने स्नेही या कुटुम्ब वालों में देख सब लोग सन्तुष्ट हो गये—

अब तीसरी आकाशवाणी जो सुन पड़ी वह यह थी कि जो यथार्थ में योग्य धीमान् और पूरे विद्वान् हैं उन्हीं को उच्च पदवी और प्रतिष्ठा मिलनी चाहिये—इतना सुनतेही धनाढ्यों ने अपनी २ कमर सम्हाली, पहलवान कपड़े उतारने लगे, और जो अपनी सुन्दरता पर अपने आप बड़े मोहित वज़ेदारी और तरहदारी में एकता समझे हुये थे आगे बढ़ प्रथम श्रेणी वाले दल में जा खड़े होने लगे; किन्तु उस दर्पण का प्रकाश जैसेही उन पर जा पड़ा वैसेही मुह मोड़ भाग खड़े हुये और सब के पीछे जा लुके—अब उस न्याय देवी ने एक बार उसी दर्पण को वहां के मनुष्य मात्र पर घुमाया और बजरबंटू से कहा कि जो २ लोग मेरे इस दर्पण के चमत्कार से मुह न ढाकैं उन्हीं को सब के आगे आसन दो—पाठक ये वही मनुष्य थे जो बड़ेही धर्मात्मा

परंज्ञानी, वेदविद्, श्रौतस्मार्तकर्मकलापकुशल, सदाचारवान् सद्-सद्विवेकी धर्म तथा विद्या के समुद्र थे और बड़ी से बड़ी डिगरी या उपाधि प्राप्त किये थे—न्याय देवी की आज्ञानुसार बजरबंटू ने उन सब महात्मा पुरुषों को आगे खड़े कर दिया—पीछे इन्हें दो श्रेणियों में बांट दिया जब उन्हें यह याद पड़ा कि "नकेवलया विद्यया तपसावापि पात्रता" धर्मनिष्ठ विद्वज्जन एक ओर और शिष्ट सम्मत खाली सदाचारवान् दूसरी ओर—और ये सब जो आगे बैठाये गये थे ऐसे तेजस्वी मालूम पड़ते थे कि इनका दर्शन किये पाप कटता था—इन को देख वे धूर्त जो खुद बखुद आगे आ बैठे थे मनोमन चूर हो गये—

अब आगे सुनिये एक बड़ा कौतुक हुआ—वह यह कि इन विद्वानों की पंक्ति जो अभी बजरबंटू ने बड़े परिश्रम से छांट के लगाई थी उनमें बड़ा झगड़ा होने लगा; जो अंग्रेज़ी पढ़े थे इन पण्डित बेचारों को बूट की ठोकर मारते आगे जा बैठे—इसपर पण्डित लोग बिगड़ खड़े हुये और इन अंगरेज़ीदाओं को इतनी कुबड़ियां जमाईं कि वे कुबड़े हो गये और कमर टोते रह गये—अन्त को उस देवी की आज्ञा से इन पण्डितोंही को अग्र आसन मिला और अंगरेज़ीदां रूमाल से आखें पोछते पीछे जा बैठे—

अब आकाश में फिर बड़ा गम्भीर नाद हुआ और यह आवाज़ आई कि पुरुष मात्र चुपके हो पश्चिम वाले मैदान में बैठाये जांय उन से कुछ विशेष बात कहना है और स्त्रियां सब सावधान हो जांय—कुछ देर तक भड़भड़ाहट के उपरान्त जब पुरुष सब बैठ गये तब स्त्रियां वहां इकट्ठी होने लगीं—आहा! इस समय मुझे परिस्तान का मज़ा आ रहा था; मेरी आखों ने आजतक ऐसी २ सुन्दर सजीली छबीली अनबेली अबलाओं को कभी पहुनाई नहीं किया था; तिसपर भी जब उस दर्पण का अक्स उन पर पड़ा तो मेरे हवास उड़ गये और इन स्त्रियों की भी उसी भांत परीक्षा हुई—परन्तु ये लोग ऐसी बातूनी थीं कि इन की बकबक के आगे कोई भी बात सुनाई नहीं देती थी; मिनिट भर भी ये चुप नहीं रहती थीं; यहां तक की कई बार न्याय

देवी को "चुपरहो खामोश" कह चिल्लाना पड़ा तब ये चुप हुईं-किन्तु आगे खड़े होने को तब भी झगड़ा कियेही रहीं-चारो ओर से यही शब्द सुनने में आया "मैं तुम से अधिक सुन्दर हूं"-"मैं अमुक बड़े धनाढ्य के वंश की पताका हूं"-"मैं कई भाषा जानती हूं"-"मेरा पतिराय बहादुर है"-"मेरा पति मुझे अपने प्राण के समान प्यार करता है; मेरी रूप माधुरी और गुन पर ऐसा मोहित है कि मेरा गुलाम बन रहा है" इत्यादि-इन सबों के लिये आज्ञा हुई कि "तुम सब अपनी २ सुन्दरता के अनुसार आगे पीछे खड़ी हो जाओ" यह सुनतेही जिनकी आखें रसीली और चटकीली थी; जिन्होंने तलवार की तेज बाढ़ के समान नुकीले और कटीले कटाक्ष से हज़ारों को हलाल कर रक्खा था आगे आना चाहा-पर बजरबंटू ने उन्हे Unfit अयोग्य कह ढकेल कर सब के पीछे खड़ी कर दिया-तब वे जो अपनी चाल, चुहल, चोचले, नाज़ ओ नख़रे में अपने को अद्वितीय माने हुई थीं वे भी आगे बढ़ने लगीं-पर बजरबंटू ने इन को समूह से निकल जाने की आज्ञा दी और वे सब खीस बाय दुम दबाय वहां से चम्पत हुईं-जब इस झगड़े को किसी तरह तै होते न देखा तो न्याय देवी ने सोने की जंज़ीर में बांध उस दर्पण को नीचे के ओर लटकाया और घुमाया जिसके घूमतेही कितनी स्त्रियां अपना मुख देखतेही ऐसी लज्जित हुईं कि उन को अपने मन में स्वयं घृणा हुई और अपने को धिक्कारती और रोती हुई तथा अपनी इस छिछोरी दशा पर बार २ पछताती हुई चली गईं-बहुत सी शान्त स्वभाव की लज्जावती सुशीला सच्चरित्रा जो यह सब वृत्तान्त दूर से देख रहीं थीं उन्हें बजरबंटू ने आदर के साथ सब के आगे ऊंचा आसन दिया जिससे वे बड़ी सन्तुष्ट हुईं-सच है "जैसा मुह वैसा थपेड़ा" जो जिस योग्य थीं उन्हें न्याय पूर्वक वैसाही सत्कार या असत्कार मिला-कुछ स्त्रियां जो हाथ में झोलची, बगल में आसन और धोती, गले में काठ की माला पहने गंगा जी के तारने को तीनही बजे से उठ कमर बांधती थीं और अपने को साक्षात् धर्म देव की नानी समझे हुये थीं यहां भी धोखे से आ पहुंचीं और शायद समझी होंगी कि इन के आगे और किसी को

ऊंचा पद न मिलेगा-पर "अपने मुह मियां मिट्ठू बनने से क्या होता है" इन की सब लीला तो जगत् विदित है जिनमें सिवाय दंभ और पाखण्ड के कुछ भी तत्व नहीं घर का सत्यानाश करना इनका मुख्य सिद्धान्त है-अन्त में इन की भी होलची माला आदि छीन ली गई और एक ओर सब के नीचे बैठा दी गई—

अब न्याय देवी ने कुछ शिक्षा दे इन सबों को बिदा करना उचित समझा इसलिये अपने दर्पण पर गिलाफ सा कुछ चढ़ाय बजरबंटू के हवाले किया आप सबों के मध्य में खड़ी हो पहले स्त्रियों से इस भाँत कहने लगीं-"मुझे बड़ा शोक है कि अनगिनत और असंख्य ललना जन यहाँ एकत्र हुईं किन्तु उनमें कितनी थोड़ी सुयोग्य निकलीं-आप लोगों को मालूम रहे कि योग्यता की कसौटी केवल चरित्र है; जो चरित्र पालन में अगुआ हैं वे सब ठौर अगुआ रहेंगी-नीतिज्ञों में अग्रगण्य चाणक्य इसी से कह गये हैं "समुद्रावरणाभूमिश्चरित्रावरणा स्त्रियः" चरित्र स्त्रियों के लिये एक आवरण अर्थात् ढकना है वैसाही जैसा समुद्र पृथ्वी को चारो ओर से आवरण किये हुये इसकी सीमा या मर्यादा स्थापित किये हैं उसे निर्मर्याद नहीं होने देता-माघ कवि ने भी लिखा है "अन्यदा भूषणं पुंसां क्षमा लज्जेव योषितः" पुरुष के लिये जैसा क्षमा भूषण है वैसाही कुलवती के लिये लज्जा बड़ा बढ़िया ज़ेवर है-ऐ मेरी प्यारी ललनाओं तुम संसार में ऊंचे से ऊंचा पद और समाज में आदर तभी पाओगी जब चरित्र की कसौटी में कसी हुई कुन्दन की सी चमक अपने में लाओगी-कविकुल गुरु कालिदास ने स्त्रियों के लिये यावत् सुचरित्र का निचोड़ इस एक श्लोक में रख दिया है-

" शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मास्मप्रतीपंगमः। भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भोगेष्वनुत्सेकिनी यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामा कुलस्याधयः"

शकुन्तला जिस समय पति के घर जाने लगी है उस समय कण्व

मुनि ने यह सिखापन दिया है-"बेटी तुम अपने पति के घर जा रही हो गुरुजन सास ससुर की सेवा टहल में सावधान रहना ; सवतों के साथ अपनी निज की सहेली का सा बर्ताव रखना ; पति कभी तुम्हारा निरादर करै तो तुम क्रोध में आय रूठकर उसके विरुद्ध न हो जाना ; अपने नाते रिश्तेवाले तथा दास दासी आदि के साथ उदार भाव रखना; तुम अब बड़े भारी राजा की रानी होने वाली हो वहां उत्तम से उत्तम भोग बिलास की किसी बात में तुम्हें कमी न रहैगी ; जिसे पाय अभिमान में फूल न उठना-बेटी जो स्त्रियां इस तरह रहती हैं वे गृहिणी या घर की मलकिन कहलाती हैं ; अपने उदार भाव और उत्तम बर्ताव से घर भर का मन अपनी मूठी में कर लेती हैं ; कोई उनकी आज्ञा के विरुद्ध नहीं हुआ चाहता ; जिसमें ये गुण न हुये वह बहू क्या बल्कि बाप मां और सास ससुर दोनों के कुल की कलंक, घर की कूड़ा, और प्रेतबाधा सी पीड़ा देने वाली है-अभी किसी ने कहा "मैं कई भाषा जानती हूं" भाषाओं में प्रवीण होना, हर तरह की विद्या सीखना, निःसन्देह बहुत प्रशंसनीय है; पर यदि तोता मैना की भांत केवल रटनाही आया उसका असर चित्त पर न हुआ तो ऐसा पढ़ना किस काम का-हम देखते हैं हमारी ललना जन जिन्होंने कुछ पढ़ लिया है वे और भी दूषित चरित्र हो गईं इन से तो हमारी सीधी सादी शुद्ध चरित्र वाली अपठिताही भली-हम अपनी अबलाओं को यही पाठ पढ़ाती हैं कि वे अपने घर गृहस्थी के काम में दक्ष और चतुर हों; और सब से बढ़ कर पढ़ना लिखना उन के लिये यही है कि वे अपने पति तथा घर के और प्राणियों की ज़िन्दगी उभारू करनेवाली न हों-यावत् जप तप दान व्रत संयम नियम पढ़ना लिखना सब का निचोड़ यही है; गुणवती सुशिक्षिता भी अपने स्वाभाविक चांचल्य से मुख न मोड़ घर के रहने वाले तथा पति को दुख देने वाली बोझ हुई तो ऐसी सुशिक्षिता की निष्फल शिक्षा को हम कैसे सराह सकतीं हैं-यह कह जो ललना जन वहां उपस्थित थीं उन्हें बिसर्जन कर पुरुषों को न्याय देवी इस भांत शिक्षा देने लगी-मैंने अपने दर्पण के प्रकाश से आप सबों को खूब अच्छी तरह वास

लिया तुम्हारी अपेक्षा हम अपनी ललनाओं को बहुत अच्छी पाते हैं वे जो किसी अंश में कहीं पर कुछ बिगड़ गई हैं इसमें हम उन का कोई दोष न कहैंगे बरन तुम्हारा उन से घनिष्ट संपर्क और अपना बुरा नमूना जो तुम उन को दर्शा रहे हो उस का फल है-सच तो यों है कि भारत इस समय तक जो सर्वथा निर्मूल नहीं हुआ अभी तक इस के पुनः उठने की कुछ आशा बनी है यह उन्हीं ललनाओं की सहन शीलता, विश्वास, उदार भाव, प्रेम और पातिव्रत का परिणाम है; जिन ललनाओं को आपने अपनी दासी बना रक्खा है उनका सा उदार भाव Nobleness और सच्चरित्र का सोलहवां हिस्सा भी हम आप लोगों में नहीं पाते-चरित्र पालन की कसौटी में अशिक्षित पुराने क्रम वाले फिर भी इस समय की सुशिक्षित सभ्य समाज से बहुत आगे बढ़ें हैं-हमारे नव युवक शिक्षा में चाहो जितना बढ़ते जाते हों पर चरित्र में कोई ऐसे होंगे जो दगीले न हुये हों-आपने अभी देखा कि मैंने विद्या को इतना गौरव नहीं दिया जितना चरित्र को-दूसरी बात यह है जिससे मैं आप को सावधान किया चाहती हूं कि यदि आप अपना कल्याण चाहते हैं तो नूतन सभ्यता के जो गुण हैं उन्हें अपने में लाने का यत्न करो न कि विष रूप उस के दोषों को-नूतन सभ्यता के आचार्यों का सा आत्म त्याग गांभीर्य उत्साह हम एक भी यहां नहीं पाते-बस मैं अब आप लोगों से बिदा होती हूं-इतने में एक बिजली सी चमकी और वह देवी न जानिये कहां अन्तर्ध्यान सी होगई-

इस सब के बाद बजरबंटू ने मेरी नाक के पास ऐसा मसाला जलाया कि मैं होश में आ गया और अपने तईं उसी कमरे में पाया-ताज्जुब का क्या ठिकाना था, मैं बारंबार अपनी आखें मलता था पर वही सब दृश्य बार बार दिखाई पड़ता था मैं घबड़ा कर बजरबंटू से बिना कुछ कहे सुने भागा -

पाठक ! यदि जादू में ऐसेही मज़े आते हैं तो मैं भी आज से ऐसे जादू में विश्वास करना आरम्भ किये देता हूं-

अ. मो कुल

स्वप्न तो था पर बात बावन तोला पाव रत्ती उतरी ।

बरसात के महीनों में सांझ का समय था जल बरस चुका था आकाश निरभ्र और स्वच्छ देख सोंचा कि कहीं चल के थोड़ा टहल आवें ; पर "काज़ी की दौड़ मसज़िद तक" घर से जो निकला तो मुह पश्चिम की ओर फिर गया और ठीक नाक के सूध पर चल दिया ; अन्त में एक बाग़ की शोभा ने ऐसा जादू सा डाला कि आगे एक कदम भी न बढ़ सका और वहांही बैठ गया—यहां के सब वृक्ष छोटे या बड़े स्नान किये से अति स्वच्छ और सुथरे मतवालों की तरह झूम २ मानो आपस में गपशप कर रहे थे—क्यारियों के कोर पर कई तरह के गमले रक्खे हुये थे ; एक कोने में एक छोटा सा कुंज था जो चारो ओर लतरों से ढंपा हुआ था ; बीचो बीच इस बाग़ के एक मैदान था जहां एक हज़ारा फोहारा अजीब कैफीयत दिखला रहा था—चारो ओर उस मैदान के भीर के भीर अनोखी सजधज के लोग टहल रहे थे परन्तु कोट पतलून वालों का नम्बर सभों में चढ़ा बढ़ा था—बहुत से काले कोइला से कुरूप पर वर्फसा सुफैद कपड़ा पहने चौकड़ी पर सवार बड़े शान शौकत से ड्रइव करते हुये निकले—एक साहब ठुड्ढी पर सुफैद दाग छिपाने को मरहम सा कुछ लगाये हुये थे ; दूसरे बाई से फूले हुये पांव के छिपाने को गरारे दार पाइजामा मुनासिब समझ पहने हुये नज़र पड़े—एक महाशय शराब और ऐयासी में पड़ पक्के आम से ज़र्द अति दुर्बल शरीर मटका सा पेट और सींक सा पतला हांथ पांव लिये साक्षात् मकरध्वज की छटा बनाये देख पड़े—यह सब भांत २ का दृश्य देख ईश्वर की लीला याद आती थी कि न जाने ईश्वर के यहाँ कौन सी ऐसी पीनल कोड Penal Code है जिस के अनुसार दंड दिया जाता है—इसी उधेड़ा बुनी में सांझ तो योंही रात हो गई सब लोग तो चले गये मुझे जो गुलशन की हवा लगी तो दुम का हिलाना तक भूल गया—कई बार जंभुआने के बाद कुछ नींद सी आ गई ; कई एक आराम कुरसियां वहां पड़ी थीं उन्हीं के सहारे वहां लुढ़क गया—चित्त कुछ बटा हुआ सा था इस से पूर्ण निद्रा तो आई नहीं हां औंघाई ने अलबत्ता आय धर दाबा—देखता क्या हूं कि आकाश में तारों की

भीड़ हो रही है और आपस में उन की बड़ी दौड़ धूप मच रही है-जब कभी एक दूसरे से टकरा जाते थे तो एक तरह की चमक उनके रगड़ से प्रगट होती थी-एक सितारा जो बनावट में बिलकुल तराजू सा था नीचे की ओर उतरता हुआ देख पड़ा और स्पष्ट रूप में उसके पलड़े मेरे सनमुख लटकने लगे-इस तराजू के आकार वाले सितारे के साथही और भी बहुत से तारे जिन के परिधि में अलग २ कुछ लिखा था उसी तराजू के पलरों पर ढेर के ढेर रक्खे हुये देख पड़े-जिसे देख मेरे मन में आया इन्हें तौल के देखूं कौन किस्से वज़न में कम या ज़ियादह है—मसल है "बैठा बानिया क्या करे इस कोठी के धान उस कोठी में धरे" अब तो मैंने तौलना आरंभ किया-पहिला बांट जो मेरे हाथ में आया उस में बुद्धि लिखा था; मैंने तुरन्त इस बांट को एक पलड़े पर धरा और दूसरे पर पहले तो धन वाला बांट रक्खा पर जब धन वाला पलड़ा बहुतही ऊपर टंग गया तो कई बांट जिन पर खिताब अथवा पदवी या उपाधियों के नाम जैसा राय बहादुर सी एस आई समसुलउल्मा इत्यादि इत्यादि लिखे थे उठा २ कर छोड़ना शुरू किया पर तौ भी दोनों पलरे बराबर न हुये-अन्त को मैंने घबड़ा के सब बांट गिरा दिये और धन वाले बांट को खिताब वाले बांट से जो तौला तो सब बराबर उतरते चले गये-फिर धन वाले बांट की परीक्षा के लिये मैंने "घमण्ड" "आत्म गौरव" Selfesteem "इज़्ज़त" "हम चुमन दीगरे नेस्त" "पोशाक" "ऐठन" "क्रोध," "अइयाशी" "दुष्कर्म" "दुस्संग और और भी कई ऐसे २ बांट दूसरे पलरे पर रक्खे परन्तु सब बराबरही उतरते चले गये-हां एक छोटा सा बांट वहां पर पड़ा देखा उसे उठाय जो उलटा पलटा तो उसपर "नर्क" लिखा था मैंने इसे भी जो आगे वाले पलरे पर रक्खा तो बड़ा तमाशा हुआ कहावत है-"छोटा सब से खोटा" जितने तरह के बांटों के नाम मैंने ऊपर गिनाये सबों को मुझे उस धन वाले पलरे पर धरना पड़ा किन्तु इस छोटे बांट वाले पलरे ने भूमि न छोड़ी-तब मैं क्रोध में आय कई एक मोटे २ रईसों को जो वहां मेरे इर्द गिर्द खड़े देख पड़े पकड़ २ उस पर बैठा दिया तब भी पलरा न उठा

तब मैंने कई एक शहर की नामी रूपा जीवाओं को जो उन रईसों के साथ फिटन और ब्रूहम पर चढ़ वहां आई थीं उठा २ कर उसी पलरे पर धर दिया किन्तु पलरे पर जगह की किल्लत से उन्हें उन रईसों की गोद में बैठना पड़ा—ये बेचारे कुछ लज्जित तो ज़रूर हुये पर दिल में तबियत उन की ऐन गैन हो गई—अब तो मुझे बड़ा खेद और खिजलाहट मालूम पड़ने लगी पर मैंने तो यह प्रण कर लिया था कि चाहो जो हो इस छोटे बांट वाले पलरे को उठाई कर चैन लूंगा—अब जो कुछ मेरे हाथ पड़ा सब उसी पर लादने लगा—एक अचरज और हुआ वह यह था कि जितनाही उस पलरे पर लादता जाता था उतनाही वह पलरा बढ़ता चला जाता था—इधर उधर देखा तो कुछ लोग और वहाँ खड़े थे उन की बात चीत से मुझे मालूम हुआ कि वे सब मांस आहारी हैं बस उन्हें भी पकड़ के ले गया और उसी नर्क के मुकाबले वाले पलरे पर रख दिया—फिर जो आंख फेरा तो कुछ लोग ऐसे देख पड़े जो जनेऊ पहने आपस में हंस रहे थे—पाठक ये लोग वे थे जो लड़के लड़कियों की तिजारत करते हैं; और दुध मुहे बच्चों को ब्याह आंख का सुख देखते हैं; इन्हें भी मैंने लै जाय उसी पलरे पर जा पटका और फिर खोज करने लगा तो बहुत से पण्डित तिलक छापा लगाये दंभ की साक्षात् मूर्ति; अहमकी का मानो पीताम्बर और डुपट्टा धारण किये; दीर्घ सूत्रता और लंठता की ऊंची २ पगड़ी पहने; कहीं से नेवता जीम कर आ रहे थे—इन्हें देख मुझे निश्चय हो गया कि अब पलरा ज़रूर उठ जायगा परन्तु उस छोटे बांट वाले पलरे ने तब भी भूमि न छोड़ा—मैंने तब खिन्न हो एक ओर फिर जो ताका तो एक मकानदेख पड़ा जिस में लैम्प सा कुछ जल रहा था और कोलाहल मचा था; कोई जीभ लड़खड़ा २ के गा रहा था; कोई रोता था; कोई आपस में हाथ जोड़ एक दूसरे की व्यर्थ खुशामद कर रहा था—एक नाज़नीन एक हाथ में प्याला दूसरे हाथ में बोतल सी लिये न जानिये क्या उड़ेल २ सब को पिलाती जाती थी—वहां एक प्रकार की दुर्गन्धि होने के कारण पहले तो मैं घबड़ाया पर मुझे तो तौल पूरी करना था